ओ३म्

गुरुकुल दर्शन

वैदिक एवं राष्ट्रीय मूल्यों का संवाहक

गुरुकुल कुरुक्षेत्र का मुख पत्र

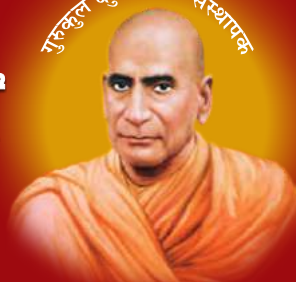

वेदोद्धारक आर्य समाज के संस्थापक

स्वामी दयानन्द सरस्वती

गुरुकुल कुरुक्षेत्र के संस्थापक

स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती

ज्येष्ठ वि. स. 2075 • कलियुगाब्द 5119 • वर्ष : 05 • अंक : 05 • मई 2018

मानयीय उप राष्ट्रपति श्री वैंकेया नायडू जी का पुष्पगुच्छ भेंट कर अभिनन्दन करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

स्वामित्व :

गुरुकुल कुरुक्षेत्र (हरियाणा)-136 119

(केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् नई दिल्ली से 10+2 तक सम्बद्ध)

दूरभाष: 01744–238048, 238648

E-mail : kurukshetragurukul@gmail.com Website : www.gurukulkurukshetra.com

AN ISO 2008 CERTIFIED INSTITUTE

वीर सावरकर के जन्मदिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ

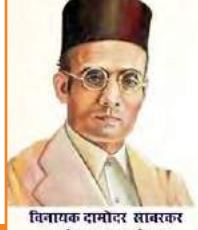

काल स्वयं मुझ से डरा है,
मैं काल से नहीं,
कालेपानी का कालकूट पीकर
काल से कराल स्तंभों को झकझोर कर,
मैं बार–बार लौट आया हूँ,
और फिर भी मैं जीवित हूँ।
हारी मृत्यु है, मैं नहीं.....

विनायक दामोदर सावरकर
28 मई 1883-26 फरवरी 1966

समाज सुधार की झलकियाँ

हमीरपुर में आयोजित 9वीं भारतीय युवा कांग्रेस के उद्घाटन अवसर पर माननीय उप राष्ट्रपति श्री वैंकेया नायडू जी के साथ आचार्य देवव्रत जी, केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री जे. पी. नड्डा जी, मुख्यमंत्री जयराम ठाकुर जी व अन्य महानुभाव।

हिसार में आयोजित 'नाज है बेटियों पर' कार्यक्रम में एक प्रतिभाशाली बेटी को पुरस्कृत करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

राजभवन में सशस्त्र सीमा बल वाइव्स वैल्फेयर एसोसिएशन 'संदीक्षा' के प्रतिनिधिमंडल के साथ राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

रूस में भारतीय संगीत का डंका बजाने वाली युवा गायिका पायल ठाकुर को राजभवन शिमला में सम्मानित करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

राजभवन शिमला में 'टर्निंग प्वाइंट' पुस्तक का विमोचन करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी, साथ में है हिमाचल के मुख्य सचिव विनीत चौधरी व अन्य अधिकारीगण

गुरुकुल में छात्रों को सम्बोधित करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी, साथ में है प्रधान कुलवन्त सैनी, प्राचार्य कर्नल अरुण दत्ता जी, सह-प्राचार्य शमशेर सिंह

अंबाला में आर्य समाज द्वारा आयोजित कार्यक्रम का दीप प्रज्वलित कर शुभारम्भ करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी व लेडी गर्वनर श्रीमती दर्शना देवी जी

ओ३म्

गुरुकुल दर्शन

'सम्पादक परिवार'

संरक्षक : आचार्य देवव्रत
(महामहिम राज्यपाल, हि. प्र.)
मुख्य संपादक : कुलवंत सिंह सैनी
मार्गदर्शक : विश्वबंधु आर्य
प्रबंध-संपादक : शमशेर सिंह
सह-संपादक : आचार्य सत्यप्रकाश
सूबेप्रताप आर्य
सुखविन्द्रपाल आर्य
नंदकिशोर आर्य
कानूनी सलाहकार : राजेन्द्र सिंह 'कलेर'
वित्तीय सलाहकार : सतपाल सिंह
पत्रिका व्यवस्थापक: राजीव कुमार आर्य
वितरण व्यवस्थापक: समरपाल आर्य
: अशोक कुमार

गुरुकुल भूमिदाता
सेठ ज्योति प्रसाद जी

आवश्यक सूचनाएं

1. **'गुरुकुल दर्शन'** मासिक पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण लेखकों के हैं, संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्याय-क्षेत्र कुरुक्षेत्र होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के अन्दर ही मानी जाएगी।
2. पत्रिका के विलम्ब अथवा अनियमित रूप से मिलने की स्थिति में चलभाष 8689002402 पर सूचना देवें। पत्रिका के सम्बन्ध में आपकी प्रतिक्रिया और सुझाव की हमें अपेक्षा रहेगी।

– संपादक

अनुक्रमणिका

क्र.	विवरण	पृ.सं.
1.	शून्य लागत प्राकृतिक खेती और गौवंश संरक्षण	02
2.	नान्यः पन्था	03
3.	हिन्दी पत्रकारिता दिवस	04
4.	स्वामी दयानन्द ने विफल की अंग्रेजों की चाल	05
5.	राष्ट्रभाषा हिन्दी	06
6.	तीन चेतन देवता- माता, पिता और आचार्य	08
7.	महान् स्वतंत्रता सेनानी रास बिहारी बोस	10
8.	कैसा होना चाहिए धार्मिक संगठन?	11
9.	मनुष्य बनो	13
10.	समस्त पर्यावरण को शुद्ध रखना देवयज्ञ है	14
11.	गौमूत्र के चमत्कारी गुण	15
12.	माँ भारती का सच्चा सिपाही : विनायक दामोदर सावरकर	16
13.	मूर्तिपूजा का सत्य	18
14.	झूठ की खेती	19
15.	स्वामी श्रद्धानन्द की जामा मस्जिद से गर्जना	20
16.	वैश्विक उन्नति का आधार : भारतीय संस्कृति	21
17.	आस्तिकता और चमत्कार	23
18.	गुरुकुल कुरुक्षेत्र : संक्षिप्त परिचय	24

संपादकीय

शून्य लागत प्राकृतिक खेती और गौवंश संरक्षण

हिमाचल प्रदेश *के महामहिम राज्यपाल एवं गुरुकुल कुरुक्षेत्र के संरक्षक आचार्य देवव्रत जी के '**जीरो बजट प्राकृतिक कृषि**' मॉडल की चर्चा इन दिनों पूरे भारतवर्ष में हो रही है। स्वयं देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी भी मंचों से आचार्य देवव्रत जी के इस अभियान की चर्चा करते नजर आ रहे हैं जो अपनेआप में बड़ी बात है। आचार्य देवव्रत जी के इस मॉडल से न केवल किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा बल्कि भूमि की उर्वरा शक्ति, जल स्तर बढ़ने के साथ-साथ गौवंश का संरक्षण भी होगा।*

आचार्य देवव्रत जी *1981 से जुलाई 2015 तक गुरुकुल कुरुक्षेत्र के प्राचार्य के रूप में कार्यरत रहे और इस दौरान उन्होंने गुरुकुल का न केवल कायाकल्प किया बल्कि गुरुकुल की 180 एकड़ भूमि में जीरो बजट प्राकृतिक कृषि को बढ़ावा देकर जमीन को उपजाऊ बना दिया जो अब सोना उगल रही है। गुरुकुल में कोई भी इच्छुक किसान शून्य लागत प्राकृतिक कृषि का नि:शुल्क प्रशिक्षण प्राप्त कर सकता है। कृषि विश्वविद्यालयों और कृषि एवं बागवानी विभाग द्वारा इस संदर्भ में कई प्रशिक्षण कार्यक्रम व सम्मेलन भी करवाये जा रहे हैं।*

वैज्ञानिक शोध *में पता चला है कि एक ग्राम देशी गाय के गोबर में 300-500 करोड़ सूक्ष्म जीवाणु पाये जाते हैं। गाय के गोबर में गुड़ एवं अन्य पदार्थ डालकर उससे सूक्ष्म जीवाणु बढ़ाने की क्रिया तेज कराके तैयार जीवामृत व घनजीवामृत जब खेत में पड़ता हैद तो करोड़ों सूक्ष्म जीवाणु भूमि में पहुंचते हैं, जो पौधों का भोजन निर्माण करते हैं। इसके प्रयोग के बाद फसल को किसी बाहरी पदार्थ की जरूरत नहीं पड़ती। शून्य लागत प्राकृतिक खेती के जो प्रयोग अब तक हुए हैं, उसमें देशी गाय के गोबर से प्राकृतिक खाद तैयार कर फसलों का उत्पादन किया गया है।*

शून्य लागत *खेती देशी गाय, गोबर और गोमूत्र पर आधारित है। एक देशी गाय के गोबर और गोमूत्र से 30 एकड़ भूमि पर खेती की जा सकती है। गोबर और गोमूत्र से पोषक तत्त्वों की भरपाई और बीज शोधन करने वाली दवाएं (जीवामृत, घनजीवामृत और बीजामृत) बनायी जाती है। इस विधि से होने वाली खेती में न तो रासायनिक खादों का प्रयोग होता है और न ही कीटनाशकों या रसायन से तैयार बीजोपचारित दवाओं का। आज किसान सबकुछ जल्दी प्राप्त करने के चक्कर में प्राकृतिक खाद की बजाय बाजार में उपलब्ध यूरिया खाद का ही इस्तेमाल कर रहे हैं जिससे भूमि की उपजाऊ क्षमता निरन्तर घटती जा रही है।*

राष्ट्रीय *स्तर पर देश में गायों की घट रही संख्या चिन्ता का विषय है। देश में जहाँ गायों की संख्या घट रही है वहीं भैंसों की संख्या में कहीं अधिक वृद्धि हुई है। देश में पशुचारे की जबरदस्त कमी भी इसका एक प्रमुख कारण है। सरकारी आंकड़ो के हिसाब से राष्ट्रीय स्तर पर चारे की कुल जरूरत के 62 फीसदी तक चारे की कमी है। चारे की लागत बढ़ने से पशुपालक केवल दुधारू अथवा जरूरत वाले पशुओं के लिए ही चारे का बन्दोबस्त कर पाते हैं। खेती में बैलों का उपयोग न के बराबर रह गया है। खेती का ज्यादातर कार्य ट्रैक्टर व अन्य उपकरणों से होने के कारण बैलों की उपयोगिता कम हो गई है। दूध उत्पादन पर आने वाली लागत का 70 फीसदी केवल चारे पर ही खर्च होता है। दूध का मूल्य वसा से तय होता है, जो गाय के मुकाबले भैंस के दूध में अधिक पाया जाता है। यही कारण है कि दुधारू पशुओं में गाय के मुकाबले भैंस की आबादी में तेजी से वृद्धि हो रही है।*

एक रिपोर्ट *के अनुसार दूध देना बंद कर चुकी या सूख चुकी गायों को पालना बहुत महंगा साबित होने की वजह से किसानों ने गाय पालन से मुंह मोड़ना शुरु कर दिया है। पिछले कुछ समय से लोगों को रूझान प्राकृतिक खेती की ओर बढ़ा है और प्राकृतिक खेती में देशी गाय की भूमिका बड़ी महत्त्वपूर्ण है। ऐसे में आचार्य देवव्रत जी के शून्य लागत प्राकृतिक खेती मॉडल को अपना किसान न केवल अपनी आमदनी को दोगुना बर सकते हैं बल्कि इससे देश की सड़कों पर आवारा घूम रहे गौवंश की दशा भी सुधरेगी। प्रयोगों में यह पाया गया है कि दुधारू गायों की अपेक्षा दूध न देने वाली गायों के गोबर व गौमूत्र में खेती के लिए उपयोगी सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या अधिक होती है, ऐसे में दूध न देने वाली गाय शून्य लागत प्राकृतिक खेती के लिए और भी ज्यादा फायदेमन्द हैं। स्पष्ट है कि आचार्य देवव्रत जी के '**शून्य लागत प्राकृतिक खेती**' मॉडल को अपनाकर न केवल देश का किसान समृद्ध होगा बल्कि इससे गौवंश का संरक्षण भी होगा।*

- कुलवंत सिंह सैनी

नान्यः पन्था इसके भिन्न अन्य कोई मार्ग नहीं है

पिछले दिनों मुझे एक अलग अनुभव देखने को मिला। मेरे क्लीनिक पर एक मेरा परिचित अपने बच्चे को दिखाने आया। मैंने बीमारी के लक्षण देखकर उन्हें दवाई दे दी। वह चला गया। मैं भी किसी कार्य विशेष से क्लिनिक से निकल गया। थोड़ी दूर एक मस्जिद के बाहर मुझे वह खड़ा मिला। मैंने उससे उत्सुकतावश पूछ लिया। आप हिन्दू हो और मस्जिद के दरवाजे पर क्या कर रहे हो? वह बोला दवा आपने दे दी। दुआ मौलवी जी से लेने आये है! बच्चा बीमार है। दोनों के बिना आराम नहीं होता।

मेरे मन में उसका कथन बहुत देर तक उथल-पुथल करता रहा। मैं यही सोचता रहा कि हिन्दू समाज की ऐसी हालत क्यों हुई?

इसका मूल कारण था वेद पथ का त्याग करना। हिन्दू समाज के धर्माचार्यों, महंतों, मठाधीशों, कथावाचकों आदि ने वेद सन्देश की अनदेखी कर जो असत्य मार्ग अपनाया। यह उसी का परिणाम है। कुछ उदहारण देकर समझाता हूँ।

डॉ. विवेक आर्य

हिन्दू समाज के मठाधीशों ने वेद विदित निराकार ईश्वर की पूजा छोड़कर मूर्तियों की पूजा करनी सिखाई। परिणाम क्या निकला। हिन्दुओं की संतानें उन्हीं मूर्तियों की पूजा छोड़, आज मुसलमानों की कब्रों पर जाकर सर पटकती हैं। अगर निराकार ईश्वर की पूजा करते तो ऐसा कभी नहीं होता।

हिन्दू समाज के मठाधीशों ने वेद विदित सच्चिदानन्द स्वरूप ईश्वर को छोड़कर मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम एवं योगिराज श्री कृष्ण (दोनों महापुरुष स्वयं वेदों के ज्ञाता और निराकार ईश्वर के उपासक थे) की पूजा करनी सिखाई। परिणाम क्या निकला? हिन्दुओं की संतानें आज श्री राम और श्री कृष्ण को छोड़कर शिरडी के **साईं बाबा उर्फ चाँद मियां** की भिन्न-भिन्न मूर्तियां बनाकर उन्हें पूज रही हैं अगर निराकार ईश्वर की पूजा करते तो ऐसा कभी नहीं होता।

हिन्दू समाज के मठाधीशों ने वेदों के ज्ञान को छोड़कर वेद विरुद्ध काल्पनिक पुराणों में जनता को उलझा दिया। परिणाम क्या निकला? हिन्दुओं की संतानें वेद विदित महान गायत्री मंत्र को छोड़कर ओ३म् साईं राम जैसे काल्पनिक मन्त्रों में उलझ कर रह गई। अगर ईश्वरीय ज्ञान वेद के ज्ञान को प्रचारित करते तो ऐसा कभी नहीं होता। यजुर्वेद में एक मंत्र है -

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तं आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वा ऽतिमृत्युयेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।।

(यजुर्वेद 31/18)

नान्यः पन्था का अर्थ है इसके भिन्न अन्य कोई मार्ग नहीं है। अपनी अपनी दुकान चलाने, अपना धंधा चमकाने, अपने भेड़ों के समान शिष्यों की संख्या बढ़ाने के लिए जितने भी प्रपंच जो लोग कर रहे है। वे नान्यः पन्था के वेद के सन्देश के विपरीत चल रहे हैं। वे हिन्दुओं का भला तो क्या ही करेंगे। थोड़े डूबे को और गहरे अवश्य डुबों देंगे ऐसे में बहुत आवश्यक है कि वेद का सन्देश अपनाओ!

- डॉ. विवेक आर्य
बाल रोग विशेषज्ञ, नई दिल्ली

कविता : उठो द्रौपदी

उठो द्रौपदी! वस्त्र संभालो अब गोविन्द न आयेंगे।

कब तक आस लगाओगी तुम बिके हुए अखबारों से।
कैसी रक्षा मांग रही हो दुःशासन दरबारों से।
स्वयं जो लज्जाहीन पड़े हैं वे क्या लाज बचायेंगे?
उठो द्रोपदी! वस्त्र संभालो, अब गोविन्द न आयेंगे।

कल तक केवल अंधा राजा, अब गूंगा बहरा भी है।
होंठ सिल दिये हैं जनता के कानों पर पहरा भी है।
तुम्हीं कहो ये अश्रु तुम्हारे किसको क्या समझायेंगे?
उठो द्रोपदी! वस्त्र संभालो, अब गोविन्द न आयेंगे।

छोड़ो मेंहदी भुजा संभालो खुद ही अपना चीर बचा लो।
द्यूत बिछाये बैठे शकुनि मस्तक सब बिक जायेंगे।
उठो द्रोपदी! वस्त्र संभालो, अब गोविन्द न आएगे!

संकलन : महाशय जयपाल आर्य,
भजनोपदेशक गुरुकुल कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

हिंदी पत्रकारिता दिवस

हिंदी पत्रकारिता दिवस प्रतिवर्ष 30 मई को मनाया जाता है। इसी तिथि को पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने 1826 ई. में प्रथम हिन्दी समाचार पत्र '**उदन्त मार्तण्ड**' का प्रकाशन आरम्भ किया था। भारत में पत्रकारिता की शुरुआत पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने ही की थी। हिन्दी पत्रकारिता की शुरूआत बंगाल से हुई थी, जिसका श्रेय राजा राममोहन राय को दिया जाता है। आज के समय में समाचार पत्र एक बहुत बड़ा व्यवसाय बन चुका है। मीडिया ने आज सारे विश्व में अपनी एक खास पहचान बना ली है।

विकास

हिन्दी पत्रकारिता ने एक लम्बा सफर तय किया है। जब पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने 'उदन्त मार्तण्ड' को रूप दिया, तब किसी ने भी यह कल्पना नहीं की थी कि हिन्दी पत्रकारिता इतना लम्बा सफर तय करेगी। जुगल किशोर शुक्ल ने काफी दिनों तक 'उदन्त मार्तण्ड' को चलाया और पत्रकारिता करते रहे। लेकिन आगे के दिनों में 'उदन्त मार्तण्ड' को बन्द करना पड़ा था। यह इसलिए बंद हुआ, क्योंकि पंडित जुगल किशोर के पास उसे चलाने के लिए पर्याप्त धन नहीं था। वर्तमान में बहुत-से लोग पत्रकारिता के क्षेत्र में पैसा लगा रहे हैं। यह एक बड़ा कारोबार बन गया है, जो हिंदी का 'क ख ग' भी नहीं जानते, वे हिंदी में आ रहे हैं। 192 वर्षों में हिंदी अखबारों एवं समाचार पत्रकारिता के क्षेत्र में काफी तेजी आई है। साक्षरता बढ़ी है। पंचायत स्तर पर राजनीतिक चेतना बढ़ी है। इसके साथ ही साथ विज्ञापन भी बढ़े हैं। हिंदी के पाठक अपने अखबारों को पूरा समर्थन देते हैं। महंगा, कम पन्ने वाला और खराब कागज वाला अखबार भी वे खरीदते हैं। अंग्रेजी अखबार बेहतर कागज पर ज्यादा पन्ने वाला और कम दाम का होता है। यह उसके कारोबारी मॉडल के कारण है।

राजा राममोहन राय ने ही सबसे पहले प्रेस को सामाजिक उद्देश्य से जोड़ा। भारतीयों के सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक हितों का समर्थन किया। समाज में व्याप्त अंधविश्वास और कुरीतियों पर प्रहार किये और अपने पत्रों के जरिए जनता में जागरूकता पैदा की। राममोहन राय ने कई पत्र शुरू किये, जिसमें अहम हैं- साल 1816 में प्रकाशित 'बंगाल गजट'। बंगाल गजट भारतीय भाषा का पहला समाचार पत्र है। इस समाचार पत्र के संपादक गंगाधर भट्टाचार्य थे। इसके अलावा राजा राममोहन राय ने मिरातुल, संवाद कौमुदी, बंगाल हैराल्ड पत्र भी निकाले और लोगों में चेतना फैलाई। 30 मई 1826 को कलकत्ता से पंडित जुगल किशोर शुक्ल के संपादन में निकलने वाले 'उदंत्त मार्तण्ड' को हिंदी

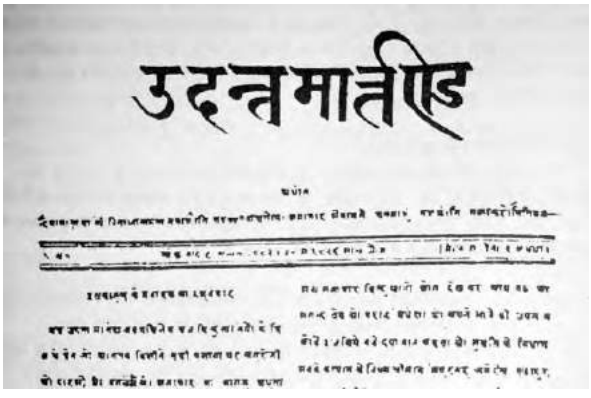
उदन्तमार्तण्ड

का पहला समाचार पत्र माना जाता है।

शिवपूजन सहाय का योगदान

हिंदी पत्रकारिता के पुरोधा आचार्य शिवपूजन सहाय 1910 से 1960 ई. तक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जैसे- आज, सन्मार्ग, आर्यावर्त, हिमालय आदि में सारगर्भित लेख लिखते रहे। उस दौरान उन्होंने हिंदी पत्रों और पत्रकारिता की स्थिति पर भी गंभीर टिप्पणियाँ की थीं। अपने लेखों के जरिये वे जहाँ भाषा के प्रति सजग दिखाई देते थे, वहीं पूँजीपतियों के दबाव में संपादकों के अधिकारों पर होते कुठाराघात पर चिंता भी जाहिर करते थे। अपने लेख '**हिंदी के दैनिक पत्र**' में आचार्य शिवपूजन सहाय ने लिखा था कि **'लोग दैनिक पत्रों का साहित्यिक महत्व नहीं समझते, बल्कि वे उन्हें राजनीतिक जागरण का साधन मात्र समझते हैं। किन्तु हमारे देश के दैनिक पत्रों ने जहाँ देश को उद्‌बुद्ध करने का अथक प्रयास किया है, वहीं हिंदी प्रेमी जनता में साहित्यिक चेतना जगाने का श्रेय भी पाया है। आज प्रत्येक श्रेणी की जनता बड़ी लगन और उत्सुकता से दैनिक पत्रों को पढ़ती है। दैनिक पत्रों की दिनोंदिन बढ़ती हुई लोकप्रियता हिंदी के हित साधन में बहुत सहायक हो रही है। आज हमें हर बात में दैनिक पत्रों की सहायता आवश्यक जान पड़ती है। भाषा और साहित्य की उन्नति में भी दैनिक पत्रों से बहुत सहारा मिल सकता है।'**

शिवपूजन सहाय का यह भी कहना था कि 'भारत की साधारण जनता तक पहुँचने के लिए दैनिक पत्र ही सर्वोत्तम साधन हैं। देश-देशांतर के समाचारों के साथ भाषा और साहित्य का संदेश भी दैनिक पत्रों द्वारा आसानी से जनता तक पहुँचा सकते हैं और पहुँचाते आये हैं। कुछ दैनिक पत्र तो प्रति सप्ताह अपना एक विशेष संस्करण भी निकालते हैं, जिसमें कितने ही साप्ताहिकों और मासिकों से भी अच्छी साहित्यिक सामग्री रहती है। दैनिक पत्रों द्वारा

हम रोज-ब-रोज की राजनीतिक प्रगति का विस्तृत विवरण ही नहीं पाते, बल्कि समाज की वैचारिक स्थितियों का विवरण भी पाते हैं। हालांकि कभी-कभी कुछ साहित्यिक समाचारों को पढ़कर ही संतोष कर लेते हैं। भाषा और साहित्य से संबंध रखने वाली बहुत कुछ ऐसी समस्याएँ हैं, जिनकी ओर जनता का ध्यान आकृष्ट करने की बड़ी आवश्यकता है, किंतु यह काम दैनिक पत्रों ने शायद उन साप्ताहिकों व मासिकों पर छोड़ दिया है, जिनकी पहुँच व पैठ जनता में आज उतनी नहीं है, जितनी दैनिक पत्रों की। दैनिक पत्र आजकल नित्य के अन्न-जल की भांति जनता के जीवन के अंग बनते जा रहे हैं। यद्यपि ये पत्र भाषा-साहित्य संबंधी प्रश्नों को भी जनता के सामने रोज-रोज रखते जाते, तो निश्चित रूप से कितने ही अभाव दूर हो जाते।'

कहा जाता है कि देश की राजनीतिक स्थिति के विषम एवं गंभीर होने से दैनिक पत्रों को कभी राजनीति से अवकाश नहीं मिलता, इसलिए वे भाषा व साहित्य की ठीक से सुध नहीं ले पाते। किंतु ऐसे तर्क पर विश्वास करना दैनिक पत्रों की राष्ट्रभाषा, भक्ति और उनके साहित्यानुराग पर संदेह करना है। हम देखते हैं कि कुछ दैनिकों को तो अपनी भाषा पर भी ध्यान देने की चिंता नहीं है। उनमें अनुवादित, घोषणाओं, भाषणों, विज्ञप्तियों और समाचारों की भाषा पढ़कर कभी-कभी बड़ी निराशा होती है। दैनिक पत्रों की कठिनाइयों से भी हम अपरिचित नहीं हैं, फिर भी दैनिकों के संपादकों के उत्तरदायित्व व ज्ञान पर हमारा विश्वास तो है ही। हम क्यों न उनसे हिंदी की गौरव रक्षा की आशा करें? वे चाहें तो भाषा संस्कार के आंदोलन को देशव्यापी बना सकते हैं, भाषा का आदर्श रूप स्थिर करने में लोकमत को प्रभावशाली बना सकते हैं, शब्दों के रूप व प्रयोग में जो विविधता अथवा मतभेद है, उसके शमन के लिए जनमत की शक्ति का उपयोग कर सकते हैं। साहित्य के अभावों को दूर कर जनता की संघशक्ति को सुदृढ़ कर सकते हैं।

पूँजीवाद तथा बाजारवाद

आचार्य शिवपूजन सहाय ने 'संपादक के अधिकार' शीर्षक लेख में लिखा था कि - हिंदी के पत्र-पत्रिका संचालकों में अधिकतर पूँजीपति हैं, और जो पूँजीपति नहीं हैं, वे भी पूँजीपति की मनोवृत्ति एवं प्रवृत्ति के शिकार हो ही जाते हैं। यही कारण है कि वे संपादकों का वास्तविक महत्व नहीं समझते, उनका यथोचित सम्मान नहीं करते, उनके अधिकारों की रक्षा पर ध्यान नहीं देते। कहने को तो देश को आजादी मिल गयी है, लेकिन पत्रकारिता और पूँजीवाद तथा बाजारवाद का बेमेल गंठबंधन आज भी इस आजाद आबोहवा में सिर्फ हिंदी की ही नहीं, बल्कि पूँजीवादी मनोवृत्ति सभी भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता के गले की फाँस बनी हुई है। पूँजीपतियों के दबाव में संपादकों-संवाददाताओं के पास आजादी नहीं है। लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहा जाने वाला पत्रकारिता और उससे जुड़े लोग मालिकों के दबाव में इस कदर हैं, कि वे अपने कर्त्तव्य का निर्वहन सही तरीके से नहीं कर पा रहे हैं। 'हिंदी और अंग्रेजी के पत्रकार' शीर्षक लेख में आचार्य सहाय ने लिखा 'यद्यपि देश के जागरण में, स्वतंत्रता संग्राम में, राष्ट्रीय आंदोलन की सफलता में और लोकमत को अनुकूल बनाने में हिंदी पत्रों ने सबसे अधिक परिश्रम किया है, तथापि अंग्रेजी के पत्रों का महत्व आज भी हिंदी के पत्रों से अधिक समझा जाता है। आज भी जनसाधारण पर हिंदी पत्रों की धाक है, पर हिंदी पत्रकारों की दशा आज भी शोचनीय है।

साभार : आर्यसमाज

स्वामी दयानन्द ने
विफल की अंग्रेजों की चाल

भारत पर जब अंग्रेजों ने कब्जा किया तो उन्होंने सबसे बड़ी कुटिल चाल भारत के मूल निवासियों को बांटने की चली। अंग्रेजों ने अपने कई शोधार्थी, अध्येता इस काम में लगाए कि वे अपने शोध, लेख आदि के जरिए लोगों के मन में यह बात बैठा दें कि 'आर्य भारत के मूल निवासी नहीं है, वे तो बाहर से आए थे और यहाँ के मूल निवासी द्रविड़ जाति को दक्षिण भारत की ओर खदेड़कर खुद यहाँ के रहवासी बन गए।'

***इस** स्थापना में अंग्रेजों को एक साथ कई लाभ दिखे। इस आधार पर वे उनके द्वारा भारत पर कब्जे को सही ठहराना चाहते थे। वे लोगों में धारणा बनाना चाहते थे कि 'जब आर्य यहाँ आकर स्थायी रूप से बस सकते हैं तो अंग्रेज क्यों नहीं।' उनकी दूसरी अहम चाल थी कि दक्षिण और उत्तर भारत के लोगों के बीच आर्य और द्रविड़ की खाई पैदा करना। 'फूट डालो और राज करो' की कूटनीति के जरिए वे भारत को सांस्कृतिक, वैचारिक, धार्मिक व सामाजिक रूप से बांटना चाहते थे, ताकि उनका पैर जमाना आसान हो।*

***आर्यसमाज** के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने गहन शोध, वेद, शास्त्र, पुराण और इतिहास के अध्ययन से अंग्रेजों की इस चाल को खंड-खंड कर दिया। स्वामी जी ने अद्‌भुत तर्क के साथ प्रतिस्थापना दी कि 'आर्य भारत के ही मूल निवासी हैं। यदि ऐसा न होता तो इतिहास में आर्यों के बाहर से आने जैसी महान् परिघटना का कहीं तो उल्लेख होता।' तर्क की कसौटी पर कसी उनकी प्रतिस्थापना ने भारतीय जनमानस में तेजी से स्थाना बनाया। इस कारण लोग अंग्रेजों की कुटिल चाल से भ्रमित होने के बजाय उल्टे उनके खिलाफ एजुट होने लगे। स्वामी दयानन्द के प्रयासों ने तब भारत को न सिर्फ आर्य-द्रविड़ की खाई में बंटने से बचाया, बल्कि आदि सनातन संस्कृति को भी सही स्वरूप में फिर से परिभाषित कर उसे जन-जन में पुनर्स्थापित किया।*

राष्ट्रभाषा हिन्दी

हिन्दी की देश में राजभाषा या राष्ट्रभाषा के रूप में जो भी स्थिति है, उसके लिए भले ही राजनीति जिम्मेदार हो किन्तु मातृभाषा के रूप में हिन्दी प्रदेशों में उसकी जैसी स्थिति है, उसके लिए हमें अपनी सांस्कृतिक दुर्बलताओं पर ध्यान देना होगा। हिन्दी प्रदेशों की यह कटु वास्तविकता है कि महाराष्ट्र, बंगाल, तमिलनाडु आदि के लोग अपनी भाषा और अपने साहित्य का वैसा सम्मान नहीं करते और न भाषा की शुद्धता की चिन्ता करते हैं, इसलिए यह आवश्यक है कि हम पहले अपने घर को ठीक करें। कहा भी गया है 'घर का दिया जलाकर मंदिर का फिर जलाना'।

पिछले दिनों टी.वी. पर एक समाचार देखा। एक राजनीतिक दल की दिल्ली निवासी, शुरू से अन्त तक दिल्ली में ही शिक्षित महिला नेता ने एक कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए **बोर्ड** पर सन्देश लिखा , '**सवच्छ भारत, सवस्थ भारत**'। उधर सहारनपुर के दंगे में अपने को पीड़ित बताने वाले पक्ष के हाथों में **एक पोस्टर** दिखा, 'जै गुरुदेव, जै भीम, जै भीम आर्मी के चीफ एडवोकेट चंदर शेककर आजाद की उ. प्रदेश सरकार और उ. प्रदेश पुलिस को चेतावनी 'बाज आ जाओ, अगर हम बिगड़ गये तो आप से सम्बले न सम्बलेंगे, हमारी माता हमारी भहनों को परेशान करना बंद करो।'

जैसे बहू की अकुशलता के लिए उसकी माँ को दोषी कहा जाता है, वैसे ही वर्तनी की इस स्थिति के लिए लोग हिन्दी शिक्षक को दोषी बताएंगे। उसे दोषमुक्त किया भी नहीं जा सकता, पर क्या अकेला वही दोषी है? वस्तुत: शुद्ध उच्चारण और शुद्ध वर्तनी का सम्बन्ध केवल हिन्दी शिक्षक से नहीं, हर उस शिक्षक से है जो हिन्दी का प्रयोग करता है। हिन्दी प्रदेश में हम दो भूलें करते आ रहे हैं। एक का सम्बन्ध स्थानीय बोलियों से है, तो दूसरी का हिन्दी की पाठ्य पुस्तकों से। हिन्दी प्रदेश में स्थानीय बोलियों के उच्चारण और वर्तनी का कुछ ऐसा आकर्षण है कि हम मानक हिन्दी के उच्चारण एवं वर्तनी पर अपेक्षित बल नहीं देते। जैसे अवधी भाषी 'क्ष' (कक्षा) को 'छ' (कच्छा) बोलता है, तो मारवाड़ी और हाड़ौती भाषी 'न' (पानी) को 'ण' (पाणी)। शिक्षा का आयोजन जिन उद्देश्यों से किया जाता है, उनमें एक है भाषा का मानक रूप सीखना। बोलियाँ तो हर भाषा में होती है फिर चाहे वह भारत की तमिल, तेलगु, मलयालम, बांग्ला आदि भाषाएँ हों या यूरोप की अंग्रेजी, जर्मन, फ्रांसीसी आदि। बोली वस्तुत: मातृभाषा का वह संदर्भ है जिसे 'पालने या झूले की भाषा' कहते हैं, यह व्यक्ति को उसके परिवार से और लघु समाज से जोड़ता है, पर मातृभाषा का दूसरा संदर्भ उसका वह मानक रूप होता है जिसके सहारे व्यक्ति अपने बृहत्तर समाज से जुड़ता है। इसीलिए इसे 'समाजीकरण की भाषा' कहते हैं। इसी को कुछ लोग साहित्यिक भाषा भी कहते हैं। भाषा के इसी मानक रूप का प्रयोग सभी प्रदेशों में प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक न केवल उस भाषा की शिक्षा में, बल्कि उसके माध्यम से पढ़ाए जाने वाले हर विषय में किया जाता है। मातृभाषा का यह रूप सीखने के लिए शब्दों के शुद्ध उच्चारण और शुद्ध वर्तनी का विशेष अभ्यास करना होता है। इस ओर सबसे अधिक ध्यान देने की आवश्यकता प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर होती है, पर हिन्दी का यह दुर्भाग्य है कि प्राथमिक स्तर पर ऐसे शिक्षक बहुत कम मिलते हैं जिनका उच्चारण शुद्ध हो और जिन्हें शुद्ध वर्तनी का ज्ञान हो ताकि वे अपने विद्यार्थियों के सामने 'आदर्श' उपस्थित कर सकें। प्राथमिक स्तर से विद्यार्थी जितना आगे बढ़ता जाता है, अशुद्ध उच्चारण और अशुद्ध वर्तनी के कारण उसे सामाजिक अपमान सहना पड़ता है, पर बाद में इनसे पिंड छुड़ाना आसान भी नहीं होता।

हिन्दी हो या अन्य भारतीय भाषाएं, सभी में पुराना साहित्य भी है और आधुनिक भी। इनमें इनेक शब्द ऐसे हैं जिनकी वर्तनी पुराने साहित्य में कुछ और भी, मानकीकरण करने के बाद आधुनिक साहित्य में उनका रूप कुछ और निर्धारित किया गया है। पाठ्य पुस्तक में जब बच्चों के सामने पुराना साहित्य भी रख दिया जाता है, तो भिन्न वर्तनी देखकर प्राय: बच्चा या तो यह मान लेता है कि दोनों वर्तनी ठीक हैं, या फिर यह सोचता है कि वर्तनी कोई महत्त्वपूर्ण विषय नहीं, खुली छूट है, जैसे चाहो वैसे लिखो। हिन्दी में हमारे बच्चों के सामने पुराना साहित्य भी प्रस्तुत कर दिया जाता है जो ब्रज, अवधी, मैथिली, राजस्थानी आदि में होता है और उनकी वर्तनी भी भिन्न होती है। हम यह भूल जाते हैं कि भाषा शिक्षक के रूप में हमारा उद्देश्य बच्चे को भाषा का मानक रूप सिखाना है। इस दृष्टि से हमें कम से कम प्राथमिक कक्षाओं की पुस्तकों में पुराने कवियों की रचनाएँ शामिल करनी ही नहीं चाहिए। यह कार्य तो वस्तुत: पाठ्यपुस्तक तैयार करने वालों का है, फिर भी इतना काम तो शिक्षक भी कर सकता है कि आधुनिक साहित्य को पहले और पुराने साहित्य को बाद में पढ़ाए ताकि मानक हिन्दी का स्वरूप बच्चों के सामने पहले आए।

हमारी सांस्कृतिक दुर्बलताओं का एक दुष्परिणाम यह भी है कि हमारे समाज में, विशेष रूप से हिन्दीभाषी समाज में पढ़ने की संस्कृति नष्ट होती जा रही है। जिस साहित्य पर भारतीय ज्ञानपीठ, साहित्य अकादमी जैसे प्रतिष्ठित पुरस्कार दिए जाते हैं, उसे पढ़ना तो दूर, उसकी कोई परिचयात्मक चर्चा तक विद्यालय या विश्वविद्यालय में कहीं सुनाई नहीं देती। शिक्षा के मंदिर में सरस्वती का यह निरादर क्यों? देश में 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में शुरू हुए सांस्कृतिक आन्दोलनों के समाज पर जो प्रभाव पड़े, उनमें एक यह भी था कि विभिन्न अवसरों पर, विशेष रूप से विवाह के अवसर पर लोग उपहार में अन्य चीजों की जगह वेद, उपनिषद्, गीता, रामायण आदि धार्मिक, साहित्यिक पुस्तकें देने लगे। प्रसिद्ध

साहित्यकार कृष्णा सोबती ने एक साक्षात्कार में बताया था – ' मेरी माँ अपने दहेज में कपड़ों के साथ 7-8 किताबें लायी थीं, सत्यार्थप्रकाश, स्त्री सुबोधिनी, रमणी रहस्य, रामायण, महाभारत आदि।' तब प्रकाशक भी 'सप्रेम भेंट' शीर्षक से एक मुद्रित पृष्ठ इसी काम के लिए पुस्तकों में देते थे। पुस्तकों के विज्ञापनों में यह लिखा जाता था कि यह पुस्तक अमुक अवसर पर उपहार में देने योग्य है। कविराज हरनाम दास बी. ए. की एक पुस्तक 'विवाहित जीवन' के विज्ञापन पुराने लोगों को याद होंगे जिनकी पहली पंक्ति कुछ इस प्रकार होती थी 'विवाह में देने का सर्वोत्तम उपहार'। विद्यालयों में वार्षिक परीक्षा में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होने वाले बच्चों को तथा अन्त्याक्षरी, वाद-विवाद जैसी विभिन्न प्रतियोगिताओं में विजेताओं को पुरस्कार में पुस्तकें ही दी जाती थीं। शील्ड, कप आदि का प्रचलन बाद में खेलों में शुरू हुआ और काफी समय तक खेलों तक ही सीमित रहा।

जन्मदिन मनाने का तब रिवाज नहीं था, पर जब यह प्रथा शुरू हुई तब भी शुरू में बच्चों को पुस्तकें ही उपहार में दी जाती थी। जिसे ये पुस्तकें मिलती थीं, वह इन्हें संभाल कर रखता था। विभिन्न अवसरों पर बड़े गर्व से कहता था कि अमुक अवसर अमुक व्यक्ति ने मुझे यह उपहार में दी थी। घर में पुस्तकें होती थीं तो अन्य लोग भी इन्हें पढ़ते थे। सांस्कृतिक आन्दोलनों का ऐसा ही एक प्रभाव यह भी पड़ा कि मोहल्ले में सार्वजनिक पुस्तकालय बनने लगे। आर्यसमाज, सेवा मंडल आदि विभिन्न धार्मिक, सामाजिक संगठनों के बाद यह परम्परा शिथिल होती चली गई। प्राय: लोग टी.वी., इन्टरनेट, मोबाइल आदि के माध्यम से विकसित हुई अपसंस्कृति को पठन-पाठन की संस्कृति के नाश का कारण मानते हैं, पर शायद महाराष्ट्र के दो उदाहरण हमारी आँखें खोलने के लिए पर्याप्त हों। वहाँ पुणे और महाबलेश्वर के बीच सड़क किनारे बसे भिलार गाँव का मुख्य व्यवसाय तो स्ट्राबेरी का कारोबार है, पर गाँव की एक विशेषता यह है कि इसके हर घर में (कृपया ध्यान दें, हर घर में) पुस्तकालय है जिसमें धार्मिक, आध्यात्मिक, साहित्यिक, सुधार आन्दोलन, खेलकूद, यात्रा-वृतान्त, स्त्री-केन्द्रित, बाल-केन्द्रित साहित्य आदि विभिन्न विषयों से सम्बंधित पुस्तकें हैं साथ ही संगृहीत पुस्तकों के रचनाकारों के चित्र भी हैं। जिस कक्ष में पुस्तकें रखी है, वहाँ बैठकर पढ़ने की व्यवस्था भी है। कुछ लोग इसी प्रयोजन से वहाँ आते हैं तो कुछ रास्ते में रुककर इसका आनन्द लेते हैं। मुख्यमंत्री देवेन्द्र फडणवीस ने अभी हाल ही में इसे 'पुस्तकाचे गाँव' कहा है और सरकार अब इस गाँव को यूनेस्को से 'बुक कैपिटल' का दर्जा दिलाने की तैयारी कर रही है।

ऐसा ही एक उदाहरण है पुणे में आयोजित '**कोथरुड साहित्य सम्मेलन**' का जिसमें भाग लेने का मुझे भी लगभग 25 वर्ष पूर्व अवसर मिला था। कोथरुड को पुणे का एक मोहल्ला कह सकते हैं, अत: यह एक नगर का नहीं, एक मोहल्ले का साहित्य सम्मेलन था। पता चला कि इस मोहल्ले में ऐसे कई साहित्यकार रहते हैं जिन्हें राज्य और राष्ट्रीय स्तर के पुरस्कार मिले हैं। सम्मेलन में युवा-प्रौढ़-वृद्ध अर्थात् सभी आयुवर्ग के लगभग डेढ़ हजार स्त्री-पुरुष शामिल रहे। इस सम्मेलन में कई बातें देखकर मेरा ध्यान साहित्य प्रेमी मराठीभाषी और हिन्दीभाषी समाज के अन्तर पर गया। एक युवा कवि को जब मंच पर आमंत्रित किया गया तो उनका परिचय देते हुए बताया कि पिछले तीन वर्ष में उनके एक कविता संग्रह की लगभग दस हजार प्रतियाँ बिक चुकी है। मुझे अपने कानों पर सहसा विश्वास नहीं हुआ, अत: मैंने पास बैठे मित्र से पुष्टि की। इस लोकप्रियता का एक कारण भी बताया कि पुस्तक का मूल्य 10 रुपये है और यह मुम्बई में तो लोकल ट्रेन के प्लेटफार्मों पर भी मिलती है। उधर मैंने देखा कि जब मंच पर चर्चा होती थी तो हाल में एकदम शान्त वातावरण होता था। ऐसा लगता था जैसे श्रोता मंत्रमुग्ध से बैठे हों और जब मंच से घोषणा होती थी कि श्रोताओं को यदि कुछ पूछना हो तो कृपया एक कागज पर अपना प्रश्न लिखकर दे दें, तो जरा सी देर में मंच पर प्रश्नों का अम्बार लग जाता था। जब प्रश्न का उत्तर देने के लिए उसे पढ़ा जाता था तब विश्वास होता था कि श्रोता मंच पर की जा रही चर्चा को केवल 'सुन' नहीं रहे थे, 'गुन' भी रहे थे। सम्मेलन में चर्चा के लिए समय की अपनी सीमा थी। अत: दो-चार प्रश्नों के उत्तर देने के बाद मंच से कहा जाता था कि सम्मेलन का जो विवरण स्मारिका के रूप में छापा जाएगा, उसमें सभी प्रश्नों के उत्तर दिये जाएंगे। अत: यदि और भी कोई प्रश्न आप देना चाहें तो अमुक सज्जन को दे दें। मैं सोचने लगा कि क्या हिन्दी में ऐसे किसी सम्मेलन की कल्पना की जा सकती है?

महाराष्ट्र की इस '**साहित्यिक संस्कृति**' से प्रेरणा लेकर हमें पुरानी उपयोगी परम्पराओं को पुनर्जीवित करना चाहिए और स्वस्थ नई परम्पराएं शुरू करनी चाहिए। समाज में यदि इस प्रकार के आयोजन सफलतापूर्वक करने हैं तो हमें विद्यालयों पर विशेष ध्यान देना होगा और विद्यालय परिसर में ही या अन्यत्र बच्चों के लिए विशेष रूप से विभिन्न साहित्यिक कार्यक्रम (गोष्ठियाँ, चर्चाएँ, पत्रवाचन आदि) आयोजित करने होंगे। बच्चों के कोर्स की पुस्तकों की सामग्री को भी इस रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। कहानियों का नाट्य रूपान्तर और नाटकों का कहानी रूपान्तर किया जा सकता है। साहित्य की ही नहीं, इतिहास, भूगोल, विज्ञान आदि की सामग्री को भी विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करके बच्चों में साहित्यिक रूचि विकसित की जा सकती है। प्रयास यह होना चाहिए कि उनमें अपनी भाषा के प्रति प्रेम विकसित हो, वे हिन्दी के शुद्ध मानक रूप का अभ्यास करें और उनकी साहित्यिक रुचियों का परिष्कार हो। ये काम कठिन नहीं, बात केवल जागरूकता की है, निष्ठा की है, संकल्प की है, समर्पण की है, अपने साहित्य प्रेम को समाज के धरातल पर स्थापित करने की है।

साभार : डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री
पी-138, एमआईजी, पल्लवपुरम् फेज -2, मेरठ 250190

तीन चेतन देवता-माता, पिता और आचार्य

मनमोहन आर्य

वेदों में देव और देवता शब्द का प्रयोग हुआ है। देव दिव्य गुणों से युक्त मनुष्यों व जड़ पदार्थों को कहते हैं। परमात्मा अर्थात् ईश्वर परमदेव कहलाता है। देव शब्द से ही देवता शब्द बना है। देवता का अर्थ होता है जिसके पास कोई दिव्य गुण हो और वह उसे दूसरों को दान करे। दान का अर्थ भी बिना किसी अपेक्षा व स्वार्थ के दूसरों को दिव्य पदार्थों को प्रदान करना होता है। हम इस लेख में चेतन देवताओं की बात कर रहे हैं।

चेतन देवताओं में तीन प्रमुख देव व देवता हैं जो क्रमशः माता, पिता और आचार्य हैं। इन तीनों देवताओं से सारा संसार परिचित है परन्तु इनके देवता होने का विचार वेदों की देन है। वेद इन्हें देवता इसलिए कहता है कि यह तीनों अपने अपने दिव्य गुणों का दान करते हैं। पहले हम माता शब्द पर विचार करते हैं। माता जन्मदात्री स्त्री को कहते हैं। माता के समान शिशु व किशोर का पालन करने वाली स्त्री भी माता कही जाती है। माता देव क्यों कही जाती है? इसका कारण यह है कि माता सन्तान को जन्म देने व पालन करने में अनेक कष्टों को उठाती है और वह सहर्ष ऐसा करती है। वह अपनी सन्तान से किसी प्रतिकार, धन व सेवा आदि के माध्यम से भुगतान की अपेक्षा नहीं करती। यह बात और है कि विवेकशील व बुद्धिमान सन्तानें अपने माता-पिता के उपकारों को जानकर उनकी सेवा करते हैं और माता-पिता के उपकारों से उऋण होने का प्रयत्न करते हैं। इसका लाभ उनको भविष्य में मिलता है।

वह जब विवाहित होकर स्वयं माता-पिता बनते हैं और उनकी सन्तानें होती हैं तो उनके अपने वृद्ध माता-पिता की सेवा के संस्कार उनकी अपनी बाल सन्तानों में आते हैं। इन संस्कारों का लाभ यह होता है कि वह भी बड़े होकर अपने माता-पिता की सेवा करते हैं। अतः सभी युवाओं व दम्पतियों को अपने माता-पिता की सेवा अवश्य करनी चाहिये। इसका उनको यह लाभ होगा कि उनकी सन्तानें भी बड़ी होकर उनकी सेवा किया करेंगी। संक्षेप में यह भी लिख दें कि माता को सन्तान को अपने गर्भ में धारण करने में अनेक प्रकार की कठिनाइयों व पीड़ाओं का सामना करना पड़ता है। 10 माह की गर्भावस्था में नाना प्रकार की समस्याओं से उन्हें संघर्ष करना पड़ता है। चिकित्सक माताओं को अनेक प्रकार की सलाह देते हैं व ओषधियां बताते हैं जिनका पालन माताओं को करना होता है। सन्तान के जन्म के बाद भी शिशु की रक्षा, उसके पालन एवं पोषण में बहुत सावधानी रखनी पड़ती है। अपना भोजन व आचारण भी एक माता के उच्च गुणों से युक्त युवती के अनुरूप करना पड़ता है जिसमें उन्हें अपनी अनेक इच्छाओं व सुख-सुविधाओं का त्याग करना पड़ता है। ऐसा करके सन्तान सकुशल जन्म ले पाती है व उसका पालन हो पाता है। आज हमने दो वर्ष की एक कन्या से फोन पर बातचीत की। यह दो वर्ष की कन्या अभी शब्दों को स्पष्ट रूप से बोल नहीं पाती। उसके माता-पिता, दादा-दादी व बुआ उसे बोलने का अभ्यास करा रहे हैं। अभी 6 माह से 1 वर्ष का समय और लग सकता है। इससे यह ज्ञात होता है कि सन्तान के निर्माण में माता की प्रमुख भूमिका होती है। माता को प्रसव पीड़ा तो होती ही है साथ ही भाषा का ज्ञान कराने में भी बहुत समय देना पड़ता है। अतः सन्तान का यह कर्तव्य होता है कि वह बड़ी होकर माता को सब सुख सुविधायें प्रदान करें और उन्हें मानसिक, शारीरिक व अन्य किसी प्रकार की असुविधा व दुःख न होने दे। सन्तानों का कल्याण करने और अनेक कष्ट व दुःख सहन करने के कारण माता अपनी सभी सन्तानों के लिए पूजनीय देवता होती है।

पिता भी सन्तान के लिए एक देवता होता है। पिता से ही सन्तान होती है। सन्तान के जन्म में माता व पिता दोनों की ही महत्वपूर्ण भूमिका है। माता-पिता के द्वारा एक आत्मा माता के गर्भ में प्रविष्ट होती हैं। आत्मा के माता के शरीर होने में ईश्वर की प्रमुख भूमिका होती है। ईश्वर यह सब कैसे करता है, अल्पज्ञ जीवात्मा इसे पूर्णतः नहीं जान सकता। ईश्वर ने सन्तान उत्पन्न करने का अपना एक विधान बना रखा है। उसी के अनुसार सन्तान जन्म लेती है। पिता की भूमिका माता व भावी शिशु के लिए आवश्यकता की सभी सामग्री व सुविधायें जुटाने की होती है।

माता को पौष्टिक भोजन चाहिये। इसके साथ स्वस्थ सन्तान के लिए माता का जीवन चिन्ताओं व दुःखों से मुक्त एवं प्रसन्नता से युक्त होना चाहिये। माता जैसा साहित्य पढ़ती है, विचार व चिन्तन करती है, प्रायः वैसी ही सन्तान बनती है। माता-पिता के चिन्तन के अनुरूप सन्तान की आत्मा में संस्कार उत्पन्न होते जाते हैं। वही संस्कार सन्तान के जन्म के बाद के जीवन में पल्लवित व पुष्पित होते हैं। अतः यह आवश्यक होता है कि गर्भावस्था काल में माता व पिता दोनों सात्विक विचार रखें। वह ईश्वर व जीवात्मा विषयक

वैदिक मान्यताओं का अध्ययन किया करें। वह वैदिक साहित्य पढ़े व अपने मन में ऐसे भाव उत्पन्न करें कि हमारी सन्तान धार्मिक, साहसी, निर्भीक, देशभक्त, ज्ञानी, सच्चरित्रता आदि के गुणों से युक्त होगी। यदि ऐसा करते हैं तो सन्तान ऐसी ही बन जाती है। पिता की भूमिका माता के समान ही महत्वपूर्ण होती है। इसलिए उसे माता के बाद दूसरा स्थान प्राप्त है। सन्तान का जन्म हो जाने के बाद बच्चे की शिक्षा, उसके पोषण व निर्माण का दायित्व पिता का होता है। बच्चे का शारीरिक व बौद्धिक विकास भली प्रकार से हो रहा है, पिता को इसका ध्यान रखना पड़ता है। यदि सन्तान को अच्छे शिक्षक व सामाजिक वातावरण मिलता है तो सन्तान एक सुसंस्कृतज्ञ सन्तान बनती है। आजकल वातवारण कुछ बिगड़ गया है। समाज पर विदेशी मानसिकता का प्रभाव बढ़ रहा है। इस कारण सन्तान में वैदिक संस्कार कम व पाश्चात्य सभ्यता के संस्कार अधिक देखे जाते हैं। विकल्प रूप में बच्चों को यदि गुरुकुलीय शिक्षा मिले तो वह अच्छी प्रकार से संस्कारित हो सकते हैं।

आज अच्छे गुरुकुलों का भी अभाव है जहां आचार्यगण माता-पिता के समान व उससे भी अच्छा, स्वामी श्रद्धानन्द जी के समान, व्यवहार करें और बच्चों की सभी प्रकार की शैक्षिक व स्वास्थ्य विषयक आवश्यकतायें गुरुकुल में पूर्ण हों। आर्यसमाज के कुछ गुरुकुल इसकी आंशिक पूर्ति ही करते हैं। आर्यसमाज के गुरुकुलों में वैल्यू एडीसन की आवश्यकता अनुभव होती है। महर्षि दयानन्द ने अपनी पुस्तक व्यवहारभानु में जैसे आचार्य और शिष्यों का उल्लेख किया है, वैसे आचार्य और शिष्य यदि हों, तो समाज का कल्याण हो सकता है। देश की सरकार मैकाले की पद्धति को प्रमुखता देती है। उसके लिए मोटे मोटे वेतन भी शिक्षकों को देती है। इस पर भी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे संस्कारित न होकर उच्च शिक्षा प्राप्त कर भी देश विरोधी नारे लगाते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। भ्रष्टाचार की घटनायें लगातार पढ़ रही है। अपराध कम होने के बाद तीव्र गति से बढ़ रहे हैं। कश्मीर में युवक संगठित रूप से पत्थर बाजी करते हैं और सरकार मूक दर्शक बन कर देखती है। कुछ करें तो मानवाधिकारवादी लोग सरकार की आलोचना करते हैं। ऐसा लगता है कि सेना के मार खाने के अधिकार हैं अपनी रक्षा करने के लिए नहीं। यह देखकर यही लगता है कि यदि माता-पिता संस्कारित हों और आचार्य भी वैदिक संस्कारों से युक्त हों तभी बच्चों व शिक्षा जगत का कल्याण हो सकता है। पिता दूसरा देव है। आजकल के पिता सन्तानों को धन व सुख सुविधायें तो भरपूर देते हैं परन्तु संस्कार न माता-पिता के पास हैं और न स्कूलों में, इसलिए नई पीढ़ी आस्तिकता व संस्कारों से दूर जा रही है और वह कार्य कर रही है जो उसे करने नहीं चाहिये।

आचार्य भी एक देवता होता है। वह बच्चों को दूसरा जन्म, उन्हें विद्यावान् कर देश व समाज के लिए उपयोगी बनाता है जो आगे चलकर धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को सिद्ध करने में समर्थ हो सकते हैं व इनकी योग्यता प्राप्त कर सकते हैं। आचार्य आचरण की शिक्षा देने वाले गुरु को कहते हैं। आचरण की शिक्षा स्वयं सदाचार को अपने चरित्र में धारण करके ही दी जा सकती है। यदि गुरु सदाचारी नहीं होगा तो शिष्य भी सच्चरित्र नहीं हो सकते। अत: आचार्यत्व का कार्य उच्च चरित्र के ज्ञानी व्यक्तियों को ही करना चाहिये, तभी संस्कारित व सच्चरित्र युवक देश को मिल सकते हैं। प्राचीन काल में राम, कृष्ण व असंख्य ऋषि-मुनि अच्छे आचार्यों की ही देन होते थे। आज वैसे आचार्य होना बन्द हो गये हैं तो राम, कृष्ण, चाणक्य, दयानन्द जैसे नागरिक व महापुरुष होना भी बन्द हो गये हैं। देश की सरकार को चाहिये कि वह अध्यापकों व आचार्यों की सच्चरित्रता के उच्च मापदण्ड बनायें। सभी गुरुजन आस्तिक व वेदों के जानकार होने चाहिये। वह मांसाहारी न हों, धूम्रपान व अण्डों का सेवन करने वाले भी न हां। वह त्याग व सन्तोष की वृत्ति को धारण करने वाले हों। आचार्यगण यम व नियम का पालन करते हों, योगी व ज्ञानी हों। वह वैदिक साहित्य का स्वाध्याय करने वाले भी होने चाहियें। ऐसे आचार्य यदि होंगे तभी वह नई संस्कारित युवा पीढ़ी को बना सकते हैं। ऐसे गुणों वाले अध्यापक ही आचार्य कहलाने के योग्य होते हैं। शब्द, भाषा, सामाजिक व राजनैतिक विषयों सहित विज्ञान व गणित आदि विषयों का ज्ञान देने वाले अध्यापक तो हो सकते हैं आचार्य नहीं। आचार्य बनने के लिए उन्हें अपना जीवन वैदिक मूल्यों पर आधारित आचार्य का जीवन बनाना होगा। तभी वह आचार्य कहला सकेंगे और उनके शिष्य चरित्रवान् होने सहित देश व समाज के हितों की पूर्ति करने वाले होंगे। सच्चा आचार्य अपने शिष्य को सच्चरित्रता व ईश्वर, जीवात्मा विषयक जो ज्ञान देता है, उस कारण से वह देवता होता है।

ज्ञान ही संसार की सबसे श्रेष्ठ वस्तु है। ज्ञानहीन मनुष्य तो पशु समान होता है। मनुष्य को पशु से मनुष्य व ज्ञानवान् बनाने में माता, पिता व आचार्य तीनों का अपना अपना योगदान है। अत: तीनों ही किसी भी मनुष्य के लिए आदरणीय, सम्मानीय व पूज्य होते हैं। इन सबकी तन, मन व धन से सेवा करना सभी सन्तानों व शिष्यों का धर्म व कर्तव्य है। ओ३म् शम्।

- मनमोहन कुमार आर्य
196, चुक्खूवाला-2, देहरादून 20081, मो-9412985121

महान् स्वतंत्रता सेनानी

रास बिहारी बोस

जन्म : 25 मई, 1886, मृत्यु : 21 जनवरी, 1945

रास बिहारी बोस प्रख्यात वकील और शिक्षाविद् थे। रास बिहारी बोस प्रख्यात क्रांतिकारी तो थे ही, सर्वप्रथम आजाद हिन्द फौज के निर्माता भी थे। देश के जिन क्रांतिकारियों ने स्वतंत्रता-प्राप्ति तथा स्वतंत्र सरकार का संगठन करने के लिए प्रयत्न किया, उनमें श्री रासबिहारी बोस का नाम प्रमुख है। रास बिहारी बोस कांग्रेस के उदारवादी दल से सम्बद्ध थे। रास बिहारी बोस ने उग्रवादियों को घातक, जनोत्तेजक तथा अनुत्तरदायी आंदोलनकारी कहा। रासबिहारी बोस उन लोगों में से थे जो देश से बाहर जाकर विदेशी राष्ट्रों की सहायता से अंग्रेजों के विरुद्ध वातावरण तैयार कर भारत की मुक्ति का रास्ता निकालने की सोचते रहते थे। 1937 में उन्होंने 'भारतीय स्वातंत्र्य संघ' की स्थापना की और सभी भारतीयों का आह्वान किया तथा भारत को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित कर दिया।

रास बिहारी बोस

जीवन परिचय

प्रथम महायुद्ध में सशस्त्र क्रांति की जो योजना बनाई गई थी, वह रासबिहारी बोस के ही नेतृत्व में निर्मित हुई थी। सन् 1912 ई. में वाइसराय लार्ड हार्डिंग पर रासबिहारी बोस ने ही बम फेंका था। तत्कालीन ब्रिटिश सरकार की सारी शक्ति रासबिहारी बोस को पकड़ने में व्यर्थ सिद्ध हुई। सरकारी नौकरी में रहते हुए भी रासबिहारी बोस ने क्रांतिकारी दल का संगठन किया। इसका गठन करने के लिए रासबिहारी बोस को व्यापक रूप से देश का बड़ी ही सतर्कता से भ्रमण करना पड़ता था। रासबिहारी बोस के क्रांतिकारी कार्यों का एक प्रमुख केंद्र वाराणसी रहा है, जहाँ आप गुप्त रूप से रहकर देश के क्रांतिकारी आंदोलन का संचालन किया करते थे। वाराणसी से सिंगापुर तक क्रांतिकारियों का संगठन करने में आपको सफलता मिली थी। क्रांतिकारी कार्यों में आपके प्रमुख सहायक श्री पिंगले थे। 21 फरवरी, सन 1915 ई. का एक साथ सर्वत्र विद्रोह करने की तिथि निश्चित की गई थी किंतु दल के एक व्यक्ति द्वारा भेद बता दिए जाने के कारण योजना सफल न हो सकी। इतना अवश्य कहा जाएगा कि सन 1857 की सशस्त्र क्रांति के बाद ब्रिटिश शासन को समाप्त करने का इतना व्यापक और विशाल क्रांतिकारी संगठन एवं षड्यंत्र नहीं बना था। भेद प्रकट हो जाने के कारण श्री पिंगले को तो फाँसी पर चढ़ना पड़ा किंतु श्री रासबिहारी बोस बच निकले फिर रासबिहारी बोस ने विदेश जाकर क्रांतिकारी शक्तियों का संगठन कर देश को स्वाधीन करने का प्रयत्न किया।

भारतीय स्वातंत्र्य संघ की स्थापना

बड़ी ही कुशलता तथा सतर्कता से आपने ठाकुर परिवार के एक व्यक्ति के पारपत्र के माध्यम से भारत से विदा ली और सन 1915 में जहाज द्वारा जापान रवाना हो गए। जब ब्रिटिश सरकार को विदित हुआ कि श्री रासबिहारी बोस जापान में हैं तो उन्हें सौंपने की माँग की। जापान सरकार ने इस माँग को मान भी लिया था किंतु जापान की अत्यंत शक्तिशाली राष्ट्रवादी संस्था 'ब्लेड ड्रैगन' के अध्यक्ष 'श्री टोयामा' ने श्री बोस को अपने यहाँ आश्रय दिया। इसके बाद किसी जापानी अधिकारी का साहस न था कि श्री बोस को गिरफ्तार कर सके। इस अवस्था में श्री बोस प्राय: आठ वर्षों तक रहे। अनंतर **आपने एक जापान की महिला से विवाह किया और वहीं रहने लगे**। वहीं आपने भारतीय स्वातंत्र्य संघ की स्थापना की। रासबिहारी बोस भारत की विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे। इसी कारण इन्हें देश में क्रांतिकारी संगठन करने में अभूतपूर्व सफलता मिली थी। जापान जाकर भी आपने भारतीय स्वतंत्रता के लिए ऐतिहासिक कार्य किए। यहाँ जापानी भाषा का अध्ययन कर आपने इस भाषा में भारतीय स्वतंत्रता के संबंध में पाँच पुस्तकें लिखीं। इन पुस्तकों का जापान में व्यापक प्रचार प्रसार हुआ। श्री संडरलैंड की '**पराधीन भारत**' शीर्षक पुस्तक का आपने जापानी भाषा में अनुवाद किया।

आजाद हिंद फौज की स्थापना

भारतीय स्वातंत्र्य संघ के संस्थापन के अतिरिक्त आपने ही प्रथम आजाद हिन्द फौज का संगठन किया। इस सेना के प्रधान मोहन सिंह थे। इसी संगठन के आधार पर नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने द्वितीय आजाद हिन्द फौज का संगठन किया। रासबिहारी बोस देश के स्वातंत्र्यवीरों में अग्रगण्य हैं। क्रांतिकारी आंदोलन द्वारा भारत को पराधीनता से मुक्त करने के लिए आपने जो पराक्रम दिखाया, वह स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

साभार : भारतकोष

कैसा होना चाहिए धार्मिक संगठन?

भारत में हिन्दुओं के हित में कार्य करने वाले अनेक संगठन जैसे कि राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, बजरंग दल, विश्व हिन्दू परिषद्, राम सेना, शिव सेना, हिन्दू युवा वाहिनी, आर्य समाज आदि कार्यरत हैं और इसके साथ ही भारत में चार मठ, कई पीठें आदि धार्मिक निर्णय करने वाली हिन्दू संस्थाएँ विद्यमान हैं लेकिन इतना सब होने के बाद भी भारत के हिन्दू समाज की समस्याएँ समाप्त होने के बजाए बढ़ती जा रही हैं- लव जिहाद, धर्मांतरण, बलात्कार, आर्थिक शोषण, मंदिरों के दान का दुरुपयोग, गौहत्या, माँसभक्षण, पश्चिमी-कुसंस्कार, व्यभिचार, भ्रूणहत्या, जातिवाद, प्रांतवाद, भाषावाद, व्यर्थ छुआछूत, दरिद्रता, सामूहिक पलायन आदि अनेक सामाजिक बुराइयाँ हिन्दू समाज में दूर नहीं हो पा रही हैं । इसका मुख्य कारण है सशक्त संगठन का अभाव होना । और एक सशक्त संगठन किस प्रकार का होता है उसके मापदंड यहाँ कहे जाते हैं : -

दशावरा वा परिषद्यं धर्मं परिकल्पयेत्।
त्र्यवरा वापि वृत्तस्था तं धर्मं न विचालयेत् ।।
(मनुस्मृति 12/60)

त्रैविद्यो हैतुकस्तर्की नैरुक्तो धर्मपाठकः ।
त्रयश्चाश्रमिणः पूर्वे परिवत्स्याद्दशावरा ।।
(मनुस्मृति 12/61)

धर्म परिषद् में कम से कम इन दश व्यक्तियों की सभा होनी आवश्यक है : तीन वेदों के विद्वान (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद) व्याकरण, निरुक्त, नैय्यायिक (तर्कशास्त्रवेता), धर्माध्यापक (गृहस्थी), ब्रह्मचारी, स्नातक (गुरुकुल पठित) और वानप्रस्थी। इन दस प्रकार के व्यक्तियों की सभा ही धर्मसभा या धर्म परिषद् कहलाती है ।

यदि ये दश व्यक्ति धर्मसभा में न हों तो कम से कम तीन की सभा तो अवश्य होनी चाहिए इसके लिये प्रमाण :-

ऋग्वेदविद्यजुर्विच्च सामवेदविदेव च ।
त्र्यवरा परिषज्ज्ञेया धर्मसंशयमिर्णये ।।
(मनुस्मृति 12/62)

ऋग्वेदवित्, यजुर्वेदवित् और सामवेदवित् इन तीनों की सभा धर्मसंशय अर्थात् सब व्यवहारों के निर्णय के लिये होनी चाहिए । इससे पता चलता है कि सशक्त संगठन के लिये ये आवश्यक है कि उसमें रहने वाले मनुष्य पूर्ण विद्वान हों क्योंकि बिना विद्वानों के वह सभा नहीं कहाती। इसके लिये मनुजी कहते हैं कि :-

अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपदीविनाम् ।
सहस्रशः समेतानां परिषत्त्वं न विद्यते ।।
(मनुस्मृति 12/64)

जो ब्रह्मचर्य, सत्यभाषण आदि से रहित, वेदविद्या से रहित जन्ममात्र से ही शूद्रवत हैं, जिन्होंने उपनयन करवाकर द्विजरूप धारण नहीं किया और मूर्ख ही रहे, उन सहस्रों मनुष्यों को मिलने से भी सभा नहीं कहाती ।

इससे स्पष्ट होता है कि हमारे जितने भी संगठन हैं वे आखिर क्यों निर्णय करने में विफल हो रहे हैं ? क्योंकि इन सबमें वेदवित् विद्वानों, तर्कशास्त्रियों, व्याकरण के ज्ञाताओं, तुरंत वेदार्थ करने में समर्थ निरुक्तों आदि का न होने से इन संगठनों में अपरिपक्व लोगों की भरमार रहती है। इसी कारण इन संगठनों की निष्क्रियता के कारण ही बेलगाम हिन्दू समाज में से नित नए-नए मत मतांतर, बाबा, गुरु, ढोंगी, व्याभिचारी आदि निकलते रहते हैं और हिन्दू समाज खंडित होकर बँटाधार को ही प्राप्त होता जा रहा है।

कारण ये है कि हिन्दू संगठनो, मठों आदि में विद्वानों की कमी और संगठनों की अज्ञानता को भाँपते हुए ही भारत में कार्यरत वामपंथी, मुस्लिम, ईसाई आदि राष्ट्रद्रोही संस्थाएँ षडयंत्रपूर्वक इन संगठनों में छद्मवेशधारी साधुओं-बाबाओं की घुसपैठ करवाती हैं जो दिखने में संत, महात्मा, संन्यासी या साधु जैसे लगते हैं परन्तु वैचारिक रूप से वामपंथी, सैक्युलर, मुस्लिम-ईसाई परस्त होते हैं। यदि इन संगठनों में कोई सदाचारी धार्मिक या दयालु मनुष्य कोई होता भी है तो उसे इन छद्म वेषधारियों द्वारा संगठनों में किनारे कर दिया जाता है या षडयंत्र के द्वारा इनके चरित्र पर दाग लगवाकर मीडिया में घुसे हुए अपने टट्टुओं द्वारा बदनाम करवाकर इनकी छवि खराब करवाकर हिन्दू युवाओं में साधुओं संन्यासीयों के प्रति घृणा पैदा करवाकर नास्तिकता को प्रोत्साहन दिया जाता है। कई बार तो ऐसा भी होता है कि इन कुछेक सदाचारियों को गायब तक करवा दिया जाता है या इनकी हत्या करवा दी जाती है ।

इसी कारण भारत में जितने भी हिन्दू समाज के आंदोलन हैं ये इसलिये समाप्त हो गए या आधे रास्ते से ही मोड़कर दिशाहीन कर दिये गए क्योंकि भारत में कार्यरत देशी और विदेशी राष्ट्रद्रोही शक्तियाँ 140 करोड़ की जनसंख्या में अपना-अपना भविष्य खोज रही हैं। भारत में इस्लामी और ईसाई शक्तियाँ बौद्धों, खालिस्तानियों, वामपंथियों आदि को आगे करके हिन्दू समाज को समाप्त करके भारत को ईसाईस्तान या दारुल इस्लाम के रूप में बाँटकर राज्य स्थापित करने के लिये प्रयासरत हैं । अरब से तेल की कम होती उपयोगीता के कारण इस्लाम कमजोर हो रहा है इसलिये अरबी इस्लाम भारत के प्राकृतिक सम्पन्न संसाधनो को हथियाने के लिये भारतीय मुस्लिम संस्थाओं को प्रोत्साहित करके दारुल इस्लाम बनाने की फिराक में है, वहीं यूरोप से समाप्त होती ईसाइयत और वैटिकन के कम होते प्रभाव के कारण भारत के

दलित, आदिवासी वर्गों में अपना भविष्य बचाने का प्रयास कर रही है, वामपंथ की साम्यवादी विचारधारा दुनिया में विफल होती भारत और नेपाल में अपना वर्चस्व को टिकाने हेतु भारत में इस्लाम और ईसाइयत के पीछे छुपकर अपना एजेंडा चलाने का प्रयास करती है ।

समस्याएँ देखने में कितनी ही भयंकर दिखती हों परन्तु इन्हें दूर करना कठिन हो सकता है पर असंभव नहीं। यदि भारत में हिन्दू समाज की पूर्ण सुरक्षा करनी हो तो संगठनों को महर्षि मनु के मापदंडों और मन्तव्यों के अनुसार सुदृढ़ करना होगा। गुरुकुलों, पाठशालाओं आदि में पठित विद्वानों की विद्याओं की अच्छी प्रकार परीक्षा करके ही धर्म सभा स्थापित करनी चाहिए, क्योंकि परीक्षा से ही विद्यावित् विद्वान और छद्मवेषधारी की परीक्षा हो सकती है। और ऐसा होने से कोई भी वामी, कामी आदि नकली साधु वेष धारण करके ऐसी धर्मसभा में घुसपैठ करने का दुस्साहस नहीं कर सकेगा और शीघ्र ही पकड़ा जायेगा। धार्मिक विद्वान मनुष्यों का संगठन इसलिये आवश्यक है क्योंकि :-

यं वदन्ति तमोभूता मूर्खा धर्ममतद्विदः ।
तत्पापं शतधा भूत्वा तद्वक्तननुगच्छति ।।

(मनुस्मृति 12/65)

तमोगुण अर्थात् अविद्या से युक्त मूर्ख वेदोक्त धर्मज्ञान से शून्य जन जिस धर्म का उपदेश करते हैं वह धर्मरूप में कहा गया अधर्मरूप पाप सौ गुना होकर सैंकड़ों वक्ताओं को फैलकर लगता है। ऐसे ही विद्वान-विदुषियों की सभा कि स्थापना कर शारीरिक बल से युक्त शस्त्रधारीयों की क्षत्रिय सेना इस संगठन की रक्षा करे और वैश्यवर्ग के लोग इनका पोषण करें ।

ऐतिहासिक उदाहरण : मगध के शासन के विरुद्ध विद्रोह करने के उद्देश्य से आचार्य चाणक्य ने विद्वानों की ही सभा स्थापित कर चन्द्रगुप्त और अन्य युवाओं को सैन्य-प्रशिक्षण दिलवाकर और धन की व्यवस्था वैश्य वर्ग वालों से करवाकर अखंड भारत के स्वप्न को सफल बनाया था। यदि ऐसी एक भी तीन से लेकर दस विद्वानों वाली धर्म परिषद् पूरे भारत में स्थापित हो जाए तो हिन्दू समाज कभी दुर्दशा को प्राप्त न होगा, क्योंकि ऐसे ही विद्वान निर्णय लेने में सक्षम, सत्यवक्ता, दृढ़ संकल्पित होने के कारण पूरे हिन्दू समाज को सही दिशा देकर भारत को पुनः वैदिक काल में ले जा सकते हैं ।

साभार: **कुमार आर्य**

आर्य भजनोपदेशक प्रशिक्षण केन्द्र, गुरुकुल कुरुक्षेत्र

'आर्य भजनोपदेशक प्रशिक्षण केन्द्र' का भव्य स्वरूप

आर्यसमाज अपने स्थापना काल से ही सामाजिक रूढ़ियों, पाखण्ड, अन्धविश्वास, गुरुड़मवाद पर कड़ा प्रहार करता रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप समाज में अनेक प्रकार के परिवर्तन देखने को मिलते हैं। जहाँ तपस्वी विद्वानों ने अपना सर्वस्व अर्पण कर भारतीय संस्कृति के आधार वेद का प्रचार-प्रसार करने में अपनी कोई लाभ-हानि नहीं देखी, वहीं गीत, भजन व उपदेश के माध्यम से दादा बस्तीराम जी, चौधरी पृथ्वीसिंह बेधड़क जी, मंगल वैद्य जी, स्वामी भीष्म जी जैसे अनेक भजनोपदेशकों ने अपनी जान हथेली पर रख कर वेद का प्रचार-प्रसार किया।

आचार्य देवव्रत जी महामहिम राज्यपाल, हिमाचल प्रदेश के मन में हमेशा से ही यह भाव रहा है कि गांव, देहात में वेद का प्रारम्भिक प्रचार भजनोपदेशक के माध्यम से जितना कारगर हो सकता है उतना अन्य से नहीं। इसी भावना को मन में रखते हुए गुरुकुल कुरुक्षेत्र में '**आर्य भजनोपदेशक प्रशिक्षण केन्द्र**' की स्थापना की गई है। इस प्रशिक्षण केन्द्र पर विधिवत् प्रशिक्षण 01 **अप्रैल** 2017 से प्रारम्भ हो चुका है। जो भी प्रशिक्षण प्राप्त करने का इच्छुक व्यक्ति है उसके आवास, प्रशिक्षण एवं भोजन की व्यवस्था गुरुकुल की ओर से निःशुल्क रहेगी। प्रशिक्षण के बाद गुरुकुल के माध्यम से ही उचित मानदेय पर अपनी सेवा भी प्रदान कर सकेंगे। इच्छुक युवा व महानुभाव सम्पर्क करें :-

कुलवंत सिंह सैनी, प्रधान गुरुकुल कुरुक्षेत्र
मोबाइल - 9996026304

नन्दकिशोर आर्य,
मो-94664 36220, 86890 01220

गुरुकुल कार्यालय,
01744-238048, 238648

मनुष्य बनो

वर्तमान समय में मनुष्यों ने भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय अपनी मूर्खता से बना लिए हैं एवं इसी आधार पर कल्पित धर्म-ग्रन्थ भी बन रहे हैं जो केवल इनके अपने-अपने धर्म-ग्रन्थ के अनुसार आचरण करने का आदेश दे रहा है। जैसे- ईसाई समाज का सदा से ही उद्देश्य रहा है कि सभी को '**ईसाई बनाओ**' क्योंकि ये इनका ग्रन्थ बाइबिल कहता है। कुरान के अनुसार केवल '**मुस्लिम बनाओ**'। कोई मिशनरियां चलाकर धर्म-परिवर्तन कर रहा है तो कोई बलपूर्वक दबाव डालकर धर्म परिवर्तन हेतु विवश कर रहा है। इसी प्रकार प्रत्येक सम्प्रदाय साधारण व्यक्तियों को अपने धर्म में मिला रहे हैं। सभी धर्म हमें स्वयं में शामिल तो कर ले रहे हैं और विभिन्न धर्मों का अनुयायी आदि तो बना दे रहे हैं लेकिन मनुष्य बनना इनमें से कोई नहीं सिखाता।

एक उदाहरण लीजिए : एक भेड़िया एक भेड़ को उठाकर ले जा रहा था कि तभी एक व्यक्ति ने उसे देख लिया। भेड़ तेजी से चिल्ला रहा था कि उस व्यक्ति को उस भेड़ को देखकर दया आ गयी और दया करके उसको भेड़िये के चंगुल से छुड़ा लिया और अपने घर ले आया। रात के समय उस व्यक्ति ने छुरी तेज की और उसे भेड़ की गर्दन पर फेर दिया। भेड़ की आत्मा दु:खी होकर उसे धिक्कारने लगी, 'तूने मुझे भेड़िये से तो बचाया, परन्तु स्वयं मुझे खा रहा है तू भी तो भेड़िया ही निकला तुझमें और भेड़िये में केवल इतना ही अन्तर है कि तू शक्ल से तो मनुष्य है, परन्तु स्वभाव का है भेड़िया।' इसी तरह अनेक सम्प्रदाय भी यही कर रहे हैं।

वास्तविकता यह है कि हम स्वयं से ही अनभिज्ञ हैं कि हम क्या हैं? यदि आपसे पूछा जाता है कि आप क्या हैं? तो आपका उत्तर होता है- हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई आदि लेकिन अगर आपसे पूछा जाए कि इससे भी पूर्व क्या आप मनुष्य हो? तो उत्तर देंगे, हाँ। पुन: पूछें- क्या मनुष्य कहलाने वाली सारे गुण आप में है? थोड़ा रुककर बोल तो देंगे, हाँ लेकिन वास्तविकता यह नहीं होती। आज मानव दानव बन रहा है, मनुष्य ही मनुष्य का वैरी हो रहा है, हम बड़े गर्व से समाज को उपदेश देते हैं कि मैं ये हूँ तो तुम भी ये बनो क्योंकि यह अच्छा धर्म है इत्यादि लेकिन कोई यह उपदेश नहीं करता कि आप मनुष्य बनो अथवा मानव धर्म अपनाओ।

मनुष्य का अर्थ यह नहीं कि पृथ्वी पर मनुष्य योनि में जन्म लिए, पैसा कमाया, सेवाओं का लाभ लिया और अन्त समय में अपना कमाया धन बांटकर या पीढ़ियों के विकास में लगाकर सभी जिम्मेदारियों से मुक्त हो गए अपितु मनुष्य तो वह होता है जो संघर्षशील हो, पुरुषार्थयुक्त हो, शिखा रखने वाला, नियमित यज्ञ

करनेवाला व यज्ञोपवीत धारण करने वाला हो, वीर हो, संयमी हो, दयावान हो, पवित्र चरित्रों वाला हो, मननशील हो, धैर्यवान हो इत्यादि। कोई धर्म-ग्रन्थ यह उपदेश नहीं करता कि मनुष्य बनो लेकिन ईश्वरीय ज्ञान वेद भगवान् ही समस्त मानव जाति के कल्याण हेतु यह आदेश देते हैं-

तन्तुं तन्वन्नजसो भानुमन्विहि ज्योतिष्मत: पथो रक्ष धिया कृतान्।
अनुल्बणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।
(ऋग्वेद, 10/53/6)

भावार्थ:- प्रभु के आदेश को सुनकर देव एक दूसरे को सन्देश देते हुए कहते हैं कि कर्मतन्तु का विस्तार करता हुआ तू हृदयान्तरिक्ष के प्रकाशक उस प्रभु के प्रेरणा के अनुसार चल। गत मन्त्रों में प्रभु ने पंचजना: शब्द से सम्बोधन करते हुए यही प्रेरणा दी है कि (क) तुम पृथ्वी, जल, तेज, वायु व आकाश इन पांच भूतों का ठीक से विकास करने वाले होवो। (ख) पाँचों कर्मेन्द्रियों की शक्ति का विकास ठीक प्रकार से हों, (ड) हृदय, मन बुद्धि, चित्त व अहंकार रूप अन्त: करण पच्चक की शक्ति का भी विकास करो। प्रभु इस प्रकार की प्रेरणाएं हृदयस्थरूपेण सदा दे रहे हैं। हमे उस प्रेरणा को सुनना चाहिए और उसके अनुसार जीवन को बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। प्रभु की प्रेरणा को सुनना ही उस प्रकाशक प्रभु के अनुकूल चलता है। इस प्रकार प्रभु की प्रेरणा को सुनने के द्वारा ज्योतिर्मय मार्गों का, देवयान का रक्षण कर। अन प्रकाशमय मार्गों पर चलने से कभी कष्ट नहीं होता। ये प्रकाशमय मार्ग बुद्धिपूर्वक कर्मों से सम्पादित होते हैं। इस मार्गों में ज्ञान व क्रम का समन्वय होता है। स्तोताओं के कर्मों को (उल्बण) अति के बिना करो। प्रभु के स्तोता किसी भी क्रम में अति नहीं करते। ये आहार-विहार में, सब कर्मों में सोने व जागने में सदया नपी-तुली क्रियाओं वालें होते है। प्रभु का स्तोता सदा मध्यमार्ग पर चलता है, किसी भी पक्ष में न

समस्त पर्यावरण को शुद्ध रखना देवयज्ञ है

संस्कार के यज्ञ कर्म को सरल और सस्ता बनाइये

स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती

जीवन के पाँच महायज्ञों में से एक का नाम देवयज्ञ है। पुरानी परम्परा है कि सूर्योदय के समय अग्नि प्रज्ज्वलित करके सुगन्धित और पौष्टिक पदार्थों को उसमें स्वाहा-उच्चार के साथ डालना चाहिए। इससे वायु की शुद्धि होती है, ईश्वर में आस्था होती हैं, और वैदिक मंत्रों के प्रति श्रद्धा बनी रहती है। देवयज्ञ स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। मनुष्य ही ऐसा प्राणी है, जो अपने घर या नगर की हवा को दूषित करता है - उसका पानी भी दूषित है, मेघ और मेघ से उत्पन्न अन्न-फूल-फल भी रोग के कारण बन जाते हैं। इसलिए मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने-अपने घरों में देवयज्ञ करे।

अग्निहोत्र या देवयज्ञ करने से पहले घर के कमरे झाड़ू देकर स्वच्छ कर लो। नालियाँ यदि गन्दी हैं, शौचालय में दुर्गन्ध है, इधर-उधर कूड़े का ढेर पड़ा है, चौका भी गन्दा है, तो ऐसी परिस्थिति में देवयज्ञ करने से आपको विशेष लाभ न होगा। देवयज्ञ आपको अपने घर पर करना है। आपका घर हवादार हो, धूप आती हो, घर में सफाई हो, तब अग्निहोत्र करें।

सबको अपने घर अग्निहोत्र करना चाहिए। आर्य समाज मन्दिर में यदि आपने हवन कर लिया, पर घर पर न किया, तो आपके घर की हवा शुद्ध न होगी। इसलिए प्रत्येक गृहस्थ को अपने घर पर हवन करना चाहिए। पुरोहित को भी चाहिये, कि अपने घर पर वह हवन करे। दूसरे के घर हवन कराने से उसके घर की हवा शुद्ध न होगी। पर्यावरण को शुद्ध रखने के लिए आप जो कुछ करते हैं, नगर पालिका कुछ करती है, वह सब देवयज्ञ है।

भावेश मेरजा

संस्कारों के समय (जातकर्म, नामकरण, चूड़ाकर्म, विवाह आदि) जो हवन करते हैं, वह देवमहायज्ञ नहीं है। उसका उद्देश्य पर्यावरण को शुद्ध करना नहीं है। उन संस्कारों की अग्नियों में औषधियों से तैयार की गयी हवन सामग्री का डालना अनिवार्य नहीं है। संस्कारों के करने-कराने का अलग महत्त्व है। संस्कार के यज्ञ कर्म को सरल और सस्ता बनाइये। पुरोहितों के आडम्बरों से बचिये। आपस में ही परिवार के लोग और कुछ इष्टमित्र मिल कर संस्कार कर डालिये। जो शिक्षित गृहस्थ प्रतिदिन देवयज्ञ करता है, वह संस्कारविधि देखकर अपने और दूसरों के घर भी संस्कार करा सकता है। संस्कारों को आडम्बरपूर्ण खर्चीला बनाया जायेगा, तो लोग संस्कार करना-कराना बन्द कर देंगे।

प्रस्तुति : भावेश मेरजा

मनुष्य बनो.. पिछले पृष्ठ का शेष

झुकता हुआ पक्षपातरहित न्याय क्रियाओं वाला होता हैं। तू सदा विचारशील हो। बिना विचारे क्रियाओं का करनेवाला न हो। अविवेक ही तो सब आपत्तियों का कारण होता है। इस ओर विचारपूर्वक कर्म करने के द्वारा तू उस देव की ओर चलने वाले व्यक्ति को उत्पन्न कर। तू अपने देव के रूप में विकसित करने वाला हो। मनुष्य से तू देव बन जाये।

स्वामी दयानन्द जी लिखते हैं- 'मनुष्य उसी को कहना जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।'

वेद में एक मन्त्र में लिखा है **'वीर भोग्या वसुन्धरा'** अर्थात् ईश्वर ने यह भूमि वीर पुरुषों के भोग्यार्थ हेतु बनाई है कापुरुषों के नहीं। हम मनुष्य भी बने तो आर्य मनुष्य बने दस्यु नहीं।

न वैरमुद्दीपयति प्रशान्तं न दर्पमारोहति नास्तमेति।
न दुर्गतोअस्मीति करोत्यकार्यं तमार्यशीलं परमाहुरार्याः।।
न स्वे सुखे वै कुरुते प्रहर्षं नान्यस्य दुःखे भवति प्रहृष्टः।
दत्त्वा न पश्चात् कुरुतेअनुतापं स कथ्यते सत्पुरुषार्यशीलः।।

(महा. उद्योग. अ. 34/ 112-113)

'जो शान्त हुए वैर को नहीं चमकाता, घमण्ड में कभी नहीं आता, तेज से हीन नहीं होता और विपदाएँ झेलता हुआ भी अकार्य नहीं करता है उसको, केवल उसी को, आर्यपुरुष आर्यशील कहते हैं। जो अपने सुख (ऐश्वर्य) में फूल नहीं जाता, दूसरे के दुःख में जो प्रसन्न नहीं होता, दान करके पीछे पछताता नहीं, वह सत्यपुरुष आर्यशील कहलाता है।यही गुण मनुष्य में हों, तो वह मनुष्य कहलाने का अधिकरी हो सकता है। अतः अज्ञानी(दस्यु) मनुष्यों के बनाये इन भ्रमजालों से निकलकर पहले स्वयं को मनुष्य बनाइए।

नोट- इस लेख का उद्देश्य किसी की आलोचना करना नहीं है अपितु समस्त मानव जाति को मनुष्य बनाने का सन्देश देना है।

साभार : आर्यसमाज

गौमूत्र के चमत्कारी गुण

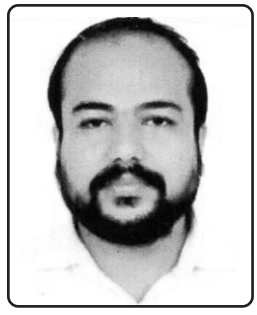

डॉ. सत्येन्द्र तिवारी

आयुर्वेद में गौमूत्र के ढेरों प्रयोग कहे गए हैं। गौमूत्र का रासायनिक विश्लेषण करने पर वैज्ञानिकों ने पाया कि इसमें 24 ऐसे तत्त्व हैं जो शरीर के विभिन्न रोगों को ठीक करने की क्षमता रखते हैं। आयुर्वेद के अनुसार गौमूत्र का नियमित सेवन करने से कई बीमारियों को खत्म किया जा सकता है। जो लोग नियमित रूप से थोड़े से गौमूत्र का भी सेवन करते हैं, उनकी रोगप्रतिरोधी क्षमता बढ़ जाती है। मौसम-परिवर्तन के समय होने वाली कई बीमारियां दूर ही रहती हैं। शरीर स्वस्थ और ऊर्जावान बना रहता है। इसके कुछ गुण इस प्रकार गए हैं :-

1. गौ मूत्र कड़क, कसैला, तीक्ष्ण और ऊष्ण होने के साथ-साथ विष नाशक, जीवाणु नाशक, त्रिदोष नाशक, मेधा शक्ति वर्द्धक और शीघ्र पचने वाला होता है। इसमें नाइट्रोजन, ताम्र, फास्फेट, यूरिया, यूरिक एसिड, पोटाशियम, सल्फेट, फास्फेट, क्लोराइड और सोडियम की विभिन्न मात्राएं पायी जाती हैं। यह शरीर में ताम्र की कमी को पूरा करने में भी सहायक है।

2. गौमूत्र को न केवल रक्त के सभी तरह के विकारों को दूर करने वाला, कफ, वात व पित्त संबंधी तीनो दोषों का नाशक, हृदय रोगों व विष प्रभाव को खत्म करने वाला, बल-बुद्धि देने वाला बताया गया है, बल्कि यह आयु भी बढ़ाता है।

3. पेट की बीमारियों के लिए गौमूत्र रामबाण की तरह काम करता है, इसे चिकित्सीय सलाह के अनुसार नियमित पीने से य—त यानि लिवर के बढ़ने की स्थिति में लाभ मिलता है। यह लिवर को सही कर खून को साफ करता है और रोग से लड़ने की क्षमता विकसित करता है।

4. प्रतिदिन 20 मिली गौमूत्र प्रात: सायं पीने से निम्न रोगों में लाभ होता है - भूख की कमी, अजीर्ण, हर्निया, मिर्गी, चक्कर आना, बवासीर, प्रमेह, मधुमेह, कब्ज, उदररोग, गैस, लू लगना, पीलिया, खुजली, मुखरोग, ब्लडप्रेशर, कुष्ठ रोग, जांडिस, भगन्दर, दन्तरोग, नेत्र रोग, धातु क्षीणता, जुकाम, बुखार, त्वचा रोग, घाव, सिरदर्द, दमा, स्त्री रोग, स्तनरोग, छिहीरिया, अनिद्रा।

5. गौमूत्र को मेध्या और हृदया कहा गया है। इस तरह से यह दिमाग और हृदय को शक्ति प्रदान करता है। यह मानसिक कारणों से होने वाले आघात से हृदय की रक्षा करता है और इन अंगों को प्रभावित करने वाले रोगों से बचाता है।

6. इसमें कैसर को रोकने वाली 'करक्यूमिन' पायी जाती है।

7. कैंसर की चिकित्सा में रेडियो एक्टिव एलिमेन्ट प्रयोग में लाए जाते है। गौमूत्र में विद्यमान सोडियम, पोटेशियम, मैग्नेशियम, फास्फोरस, सल्फर आदि में से कुछ लवण विघटित होकर रेडियो एलिमेन्ट की तरह कार्य करने लगते है और कैंसर की अनियन्त्रित वृद्धि पर तुरन्त नियंत्रण करते है। कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करते है। अर्क आप्रेशन के बाद बची कैंसर कोशिकाओं को भी नष्ट करता है यानी गौमूत्र में कैसर बीमारी को दूर करने की शक्ति समाहित है।

8. दूध देने वाली गाय के मूत्र में '**लेक्टोज**' की मात्रा आधिक पाई जाती है, जो हृदय और मस्तिष्क के विकारों के लिए उपयोगी होता है।

9. गाय के मूत्र में आयुर्वेद का खजाना है। इसके अन्दर '**कार्बोलिक एसिड**' होता है जो कीटाणु नाशक है, यह किटाणु जनित रोगों का भी नाश करता है। गौमूत्र चाहे जितने दिनों तक रखे, खराब नहीं होता है।

10. जोड़ों के दर्द में दर्द वाले स्थान पर गौमूत्र से सेकाई करने से आराम मिलता है। सर्दियों के मौसम में इस परेशानी में सोंठ के साथ गौ मूत्र पीना फायदेमंद बताया गया है।

11. गैस की शिकायत में प्रात:काल आधे कप पानी में गौ मूत्र के साथ नमक और नींबू का रस मिलाकर पीना चाहिए।

12. चर्म रोग में गौ मूत्र और पीसे हुए जीरे के लेप से लाभ मिलता है। खाज, खुजली में गौ मूत्र उपयोगी है।

13. गौमूत्र मोटापा कम करने में भी सहायक है। एक ग्लास ताजे पानी में चार बूंद गौ मूत्र के साथ दो चम्मच शहद और एक चम्मच नींबू का रस मिलाकर नियमित पीने से लाभ मिलता है।

14. गौमूत्र का सेवन छानकर किया जाना चाहिए। यह वैसा रसायन है, जो वृद्धावस्था को रोकता है और शरीर को स्वस्थ्यकर बनाए रखता है।

15. गौमूत्र किसी भी प्राकृतिक औषधि के साथ मिलकर उसके गुण-धर्म को बीस गुणा बढ़ा देता है। गौमूत्र का कई खाद्य पदार्थो के साथ अच्छा संबंध है जैसे गौमूत्र के साथ गुड़, गौमूत्र शहद के साथ आदि।

16. अमेरिका में हुए एक अनुसंधान से सिद्ध हो गया है कि गौ के पेट में '**विटामिन बी**' सदा ही रहता है। यह सतोगुणी रस है व विचारों में सात्विकता लाता है।

17. गौमूत्र लेने का श्रेष्ठ समय प्रात:काल का होता है और इसे पेट साफ करने के बाद खाली पेट लेना चाहिए। गौमूत्र सेवन के 1

माँ भारती का वीर सपूत

विनायक दामोदर सावरकर

विनायक दामोदर सावरकर न सिर्फ एक क्रांतिकारी थे बल्कि एक भाषाविद, बुद्धिवादी, कवि, अप्रतिम क्रांतिकारी, दृढ़ राजनेता, समर्पित समाज सुधारक, दार्शनिक, द्रष्टा, महान् कवि और महान् इतिहासकार और ओजस्वी वक्ता थे। उनके इन्हीं गुणों ने उन्हें महानतम लोगों की श्रेणी में उच्च पायदान पर लाकर खड़ा कर दिया।

जन्म : वीर सावरकर का पूरा नाम विनायक दामोदर सावरकर था। अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाले विनायक दामोदर सावरकर साधारणतया वीर सावरकर के नाम से विख्यात थे। वीर सावरकर का जन्म 28 मई 1883 को नासिक के भगूर गाँव में हुआ। उनके पिता दामोदरपंत गाँव के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में जाने जाते थे। जब विनायक नौ साल के थे तभी उनकी माता राधाबाई का देहांत हो गया था। विनायक दामोदर सावरकर, 20वीं शताब्दी के सबसे बड़े हिन्दूवादी थे। उन्हें हिन्दू शब्द से बेहद लगाव था। वह कहते थे कि उन्हें स्वातन्त्रय वीर की जगह हिन्दू संगठक कहा जाए। उन्होंने जीवन भर हिन्दू हिन्दी हिन्दुस्तान के लिए कार्य किया।

गौमूत्र के चमत्कारी गुण...पृष्ठ 15 का शेष

घंटे पश्चात ही भोजन करना चाहिए।

18. गौमूत्र देशी गाय का ही सेवन करना सही रहता है। गाय का गर्भवती या रोगग्रस्त नहीं होना चाहिए। एक वर्ष से बड़ी बछिया का गौ मूत्र बहुत लाभकारी होता है।

19. देसी गाय के गोबर-मूत्र-मिश्रण से 'प्रोपिलीन ऑक्साइड' उत्पन्न होती है, जो बारिस लाने में सहायक होती हैद्य इसी के मिश्रण से 'इथिलीन ऑक्साइड' गैस निकलती है जो आप्रेशन थियेटर में काम आता है।

20. गोमूत्र कीटनाशक के रूप में भी उपयोगी है। देसी गाय के एक लीटर गोमुत्र को आठ लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग किया जाता है। गोमुत्र के माध्यम से फसल को नैसर्गिक युरिया मिलता है। इस कारण खाद के रूप में भी यह छिड़काव उपयोगी होता है। गौमूत्र से औषधियां एवं कीट नियंत्रक बनाया जा सकता है।

21. अमेरिका ने गौमूत्र पर 4 पेटेंट ले लिए हैं और अमेरिकी सरकार हर साल भारत से गौमूत्र आयात करती है और उससे कैंसर की दवा बनाती हैं। अमेरिका को इसका महत्व समझ आने लगा है जबकि हमारे शास्त्रो में करोड़ो वर्षो पहले से इसका महत्व बताया गया है।

संकलन : डॉ. सत्येन्द्र तिवारी
पंचकर्म एवं प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ

वह अखिल भारत हिन्दू महासभा के 6 बार राष्ट्रीय अध्यक्ष चुने गए। 1937 में वे हिन्दू महासभा के अध्यक्ष चुने गए और 1938 में हिन्दू महासभा को राजनीतिक दल घोषित किया था। 1943 के बाद दादर, मुंबई में रहे, बाद में वे निर्दोष सिद्ध हुए और उन्होंने राजनीति से संन्यास ले लिया।

शिक्षा : वीर सावरकर ने शिवाजी हाईस्कूल नासिक से 1901 में मैट्रिक की परीक्षा पास की। बचपन से ही वे पढ़ाकू थे। बचपन में उन्होंने कुछ कविताएँ भी लिखी थीं। फर्गुसन कॉलेज, पुणे में पढ़ने के दौरान भी वे राष्ट्रभक्ति से ओत-प्रोत ओजस्वी भाषण देते थे। जब वे विलायत में कानून की शिक्षा प्राप्त कर रहे थे, तभी 1910 ई. में एक हत्याकांड में सहयोग देने के रूप में एक जहाज द्वारा भारत रवाना कर दिये गये।

क्रांतिकारी संगठन की स्थापना : 1940 ई. में वीर सावरकर ने पूना में 'अभिनव भारती' नामक एक ऐसे क्रांतिकारी संगठन की स्थापना की, जिसका उद्देश्य आवश्यकता पड़ने पर बल-प्रयोग द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त करना था। आजादी के वास्ते काम करने के लिए उन्होंने एक गुप्त सोसायटी बनाई थी, जो (मित्र-मेला) के नाम से जानी गई। ''सावरकर वे पहले कवि थे, जिसने कलम-कागज के बिना जेल की दीवारों पर पत्थर के टुकड़ों से कवितायें लिखीं। कहा जाता है उन्होंने अपनी रची दस हजार से भी अधिक पंक्तियों को प्राचीन वैदिक साधना के अनुरूप वर्षो स्मृति में सुरक्षित रखा, जब तक वह किसी न किसी तरह देशवासियों तक नहीं पहुच गई।''

सावरकर के संघर्ष : 1910 ई. में एक हत्याकांड में सहयोग देने के रूप में वीर सावरकर एक जहाज द्वारा भारत रवाना कर दिये गये। परन्तु फ्रांस के मार्सलीज बन्दरगाह के समीप जहाज से वे समुद्र में कूदकर भाग निकले, किन्तु पुनः पकड़े गये और भारत लाये गये। भारत की स्वतंत्रता के लिए किए गए संघर्षों में वीर सावरकर का नाम बेहद महत्त्वपूर्ण रहा है। महान् देशभक्त और क्रांतिकारी सावरकर ने अपना संपूर्ण जीवन देश के लिए समर्पित कर दिया। अपने राष्ट्रवादी विचारों से जहाँ सावरकर देश को स्वतंत्र कराने के लिए निरन्तर संघर्ष करते रहे वहीं दूसरी ओर देश की स्वतंत्रता के बाद भी उनका जीवन संघर्षो से घिरा रहा।

जेल यात्रा : एक विशेष न्यायालय द्वारा उनके अभियोग की सुनवाई हुई और उन्हें आजीवन कालेपानी की दोहरी सजा मिली। सावरकर 1911 से 1921 तक अंडमान जेल (सेल्यूलर

जेल) में रहे। 1921 में वे स्वदेश लौटे और फिर 3 साल जेल भोगी। 1937 ई. में उन्हें मुक्त कर दिया गया था, परन्तु भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को उनका समर्थन न प्राप्त हो सका 1947 में इन्होने भारत विभाजन का विरोध किया। महात्मा रामचन्द्र वीर (हिन्दू महासभा के नेता एवं सन्त) ने उनका समर्थन किया। और 1948 ई. में महात्मा गांधी की हत्या में उनका हाथ होने का संदेह किया गया। इतनी मुश्किलों के बाद भी वे झुके नहीं और उनका देशप्रेम का जज्बा बरकरार रहा और अदालत को उन्हें तमाम आरोपों से मुक्त कर बरी करना पड़ा।

'मातृभूमि! तेरे चरणों में पहले ही मैं अपना मन अर्पित कर चुका हूँ। देश सेवा में ईश्वर सेवा है, यह मानकर मैंने तेरी सेवा के माध्यम से भगवान की सेवा की - वीर सावरकर'

कुछ प्रमुख कार्य

सावरकर भारत के पहले व्यक्ति थे जिन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य के केन्द्र लंदन में उसके विरुद्ध क्रांतिकारी आंदोलन संगठित किया था।

सावरकर भारत के पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सन् 1905 के बंग-भंग के बाद सन् 1906 में (स्वदेशी) का नारा दे, विदेशी कपड़ों की होली जलाई थी।

सावरकर भारत के पहले व्यक्ति थे जिन्हें अपने विचारों के कारण बैरिस्टर की डिग्री खोनी पड़ी।

सावरकर पहले भारतीय थे जिन्होंने पूर्ण स्वतंत्रता की मांग की।

सावरकर भारत के पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सन् 1857 की लड़ाई को भारत का 'स्वाधीनता संग्राम' बताते हुए लगभग एक हजार पृष्ठों का इतिहास 1907 में लिखा।

सावरकर भारत के पहले और दुनिया के एकमात्र लेखक थे जिनकी किताब को प्रकाशित होने के पहले ही ब्रिटिश और ब्रिटिश साम्राज्य की सरकारों ने प्रतिबंधित कर दिया था।

सावरकर दुनिया के पहले राजनीतिक कैदी थे, जिनका मामला हेग के अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में चला था।

सावरकर पहले भारतीय राजनीतिक कैदी थे, जिसने एक अछूत को मंदिर का पुजारी बनाया था।

सावरकर ने ही वह पहला भारतीय झंडा बनाया था, जिसे जर्मनी में 1907 की अंतर्राष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेस में मैडम कामा ने फहराया था।

सावरकर वे पहले कवि थे, जिसने कलम-कागज के बिना जेल की दीवारों पर पत्थर के टुकड़ों से कवितायें लिखीं। कहा जाता है उन्होंने अपनी रची दस हजार से भी अधिक पंक्तियों को प्राचीन वैदिक साधना के अनुरूप वर्षोस्मृति में सुरक्षित रखा, जब तक वह किसी न किसी तरह देशवासियों तक नहीं पहुच गई।

वे प्रथम क्रान्तिकारी थे, जिन पर स्वतंत्र भारत की सरकार ने झूठा मुकदमा चलाया और बाद में निर्दोष साबित होने पर माफी मांगी।

ग्रंथों की रचना: उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की, जिनमें 'भारतीय स्वातंत्रय युद्ध', मेरा आजीवन कारावास' और 'अण्डमान की प्रतिध्वनियाँ' (सभी अंग्रेजी में) अधिक प्रसिद्ध हैं।

1. जेल में 'हिंदुत्व' पर शोध ग्रंथ लिखा।

2. सन् 1909 में लिखी पुस्तक 'द इंडियन वॉर ऑफ इंडिपेंडेंस-1857' में सावरकर ने इस लड़ाई को ब्रिटिश सरकार के खिलाफ आजादी की पहली लड़ाई घोषित की थी।

मृत्यु एवं सम्मान : सावरकर एक प्रख्यात समाज सुधारक थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि सामाजिक एवं सार्वजनिक सुधार बराबरी का महत्त्व रखते हैं व एक दूसरे के पूरक हैं। सावरकर जी की मृत्यु 26 फरवरी, 1966 में मुम्बई में हुई थी। 1966 में वीर सावरकर के निधन पर भारत सरकार ने उनके सम्मान में एक डाक टिकट भी जारी किया है। उस समय हमारे देश मे राजनैतिक अस्थिरता प्रारंभ होने लगी थी तथा लालबहादुर शास्त्री की मृत्यु के उपरांत इंदिरा गांधी देश की नयी प्रधानमंत्री बनी थीं।अपने राजनैतिक विद्रोहियों को जवाब देने के लिये ही वीर सावरकर को यह सम्मान दिया गया था। अहिंसा के पुजारी के रूप में शायद यह हमारा ही एकमात्र देश भारत ही ऐसा हो सकता है जहां राष्ट्रपिता की हत्या के दो आरोपी फाँसी की सजा पायें और एक को राष्ट्रीय सम्मान से नवाजा जाय। इनके नाम पर ही पोर्ट ब्लेयर के विमानक्षेत्र का नाम वीर सावरकर अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा रखा गया है।

मूर्तिपूजा का सत्य

प्रश्न- क्या मूर्तिपूजा सीढ़ी है ?

उत्तर - जी हाँ ! बिलकुल यह सत्य है।

मूर्तिपूजा सीढ़ी ही है। देखिये, किस प्रकार एक मूर्तिपूजक सीढ़ी-दर-सीढ़ी आगे ही आगे बढ़ता है और कभी पीछे हटता नहीं है।

1. महाभारत से पहले इस देश में कोई मूर्ति नहीं पूजी जाती थी, सब केवल एक निर्गुण-सगुण-निराकार ईश्वर 'ओ३म्' की ही पूजा करते थे, सारे शास्त्र इसकी गवाही (प्रेरणा) आदेश-निर्देश दे रहे हैं।

2. उसके बाद हमारे पूर्वज योगियों की मूर्ति बना कर पूजने लगे जैसे महावीर स्वामी, शिव जी, महात्मा बुद्ध।

3. उसके बाद लोगों ने तपस्वी, वेद धर्म की रक्षा करने वालों की मूर्ति बनानी शुरू की जैसे रामचंद्र जी, श्रीकृष्ण जी आदि।

4. पहले के समय में केवल जनेऊधारी पूज्यजनों की ही मूर्तियाँ पूजी जाती थी।

5. पहले के समय में केवल वही मूर्ति पूजी जाती जिसके एक हाथ में शास्त्र होता था तो दूसरे हाथ में शस्त्र, क्योंकि वेद का आदेश है 'यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरत: सह, तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवा: सहाग्निना' (यजुर्वेद 20.25) समाज में शांति स्थापना के लिए शास्त्र और शस्त्र दोनों का समन्वय आवश्यक है, ऐसा सन्देश देने के लिए यह मूर्तियाँ बनाई जाती थीं।

6. आगे चल कर ब्रह्मचारी ज्ञान-गुण-सागर हनुमान जी की मूर्ति बना कर पूजने लगे।

7. मातृ-स्वरूपा अम्बे, दुर्गा की पूजा करने लगे।

8. फिर भी मन नहीं माना तो अज्ञानता के प्रतीक काले शनि को, काली माता को पूजने लगे।

9. शराब भोगी काल भैरव को पूजने लगे।

10. श्मशान की राख लपेटने वाले अघोरी महाकाल को पूजने लगे।

11. ये भी कम पड़ गया तो ईसा-मसीह के क्रूस पर चढ़ी मूर्ति या मरियम की गोद में बैठे ईसा को पूजने लगे।

12. इतना सब करने पर भी मन प्यासा रहा तो अजमेर जा कर या नगर-नगर, डगर-डगर बने मुर्दों, कब्रों, दरगाहों को पूजने लगे।

13. इतना सब करने के बाद भी कमी रह गयी थी इसलिए 9 गज की कब्र पूजने लगे, फिर 72 गज की कब्र पूजने लगे।

14. इसके बाद भी मन में असंतोष रहा तो विधर्मी, जनेऊ-विहीन, शास्त्र-शस्त्र-शून्य साईं को लेकर आये और उसकी बड़ी-बड़ी मूर्ति बना कर पूजने लगे।

15. इतना करने के बाद भी मन नहीं भरा तो देश में कई कुत्तों के मंदिर हैं, गधों से लेकर गाय तक की कब्र बना कर पूजी जाने लगी।

16. व्यक्ति तो छोड़िये अब तो वाहन भी पूजे जाते हैं। राजस्थान में एक मोटर बाइक की पूजा होती है। एक बार ओम्-बन्ना नामक व्यक्ति की मृत्यु, दुर्घटना में हो गयी, उसकी बाइक को पुलिस वाले थाने ले गए, और बार-बार ले गए लेकिन बाइक खुद चल कर वापस अपने मूल स्थान पर स्वयं आ जाती थी इसलिए लोगों ने उसे शक्तिशाली मान कर पूजने लगे। वहाँ शराब और नारियल चढ़ाया जाता है लेकिन कोई यह प्रश्न नहीं करता की जिस विद्या-शक्ति से बाइक वापस अपने स्थान पर आ जाती थी क्यों न उस विद्या-शक्ति का प्रयोग गायों के ऊपर चलने वाले छुरे पर किया जाये ताकि गाय कटने से बच जाए! कितना ही अच्छा हो यदि उस विद्या-शक्ति का प्रयोग पाकिस्तान से चलने वाली गोली को वापस लौटने में किया जाए ताकि हमारे सैनिक अपनी जान बचा पाएं! लेकिन लोगों ने बाइक को पूजना ही उत्तम माना।

17. देश भर में कई-कई अनपढ़, गांजा पीने वाले बाबाओं की कब्र (महा-समाधि) बनी हुई है। बेचारे कुमारिल भट्ट जी से पाणिनि, गार्गी, याज्ञवल्क्य आदि किसी ने महासमाधि नहीं ली लेकिन अनपढ़ गांजा पीने वाले कब्र बना-बना कर पूजने -पुजवाने लगे।

18. किसी-किसी मंदिर में मूर्तियों को छोड़ कर गुरुओं के उपयोग में लिए गए पलंग, गद्दी, तकिये, खड़ाऊं, ज्योति अर्थात् दीप आदि को पूजा जाता है।

19. कहीं-कहीं तो गुरु के दाँत, बाल की पूजा होती है।

20. वृक्ष और पुस्तक भी पूजे जाने लगे।

21. अभी आगे और मूर्तियाँ आएँगी, इसलिए सीढ़ी का अंतिम कदम, पायदान कहा नहीं जा सकता।

इसलिए कहता हूँ मूर्ति पूजा सीढ़ी है। ये सीढ़ी ऐसी है जो व्यक्ति को कभी पीछे नहीं हटाती, हमेशा आगे ही आगे बढाती है, कभी हार नहीं मनवाती, व्यक्ति जीवन भर विविध स्वरुप में मूर्तिपूजा करता है, पर थकता कभी नहीं है। ये ऐसी सीढ़ी है जो व्यक्ति को अध्यात्म के क्षेत्र में ऊपर की ओर नहीं परन्तु नीचे को ओर, गहरी खाई में ले जाती है और व्यक्ति जीवन भर अंतहीन मूर्ति-पूजा में लगा रहता है।

इन सब विविध-स्वरूपों पर यदि कोई प्रश्न चिह्न लगाए तो कहते हैं कि ये सब हैं तो अलग लेकिन मूल में एक ही हैं लेकिन हैं अलग-अलग फिर कहते हैं मार्ग अलग-अलग हो सकते हैं लेकिन हैं सब एक ही, सब एक ही मंजिल पर ले जाते हैं, लक्ष्य एक ही है। मूर्तिपूजा करने वाला व्यक्ति अनन्त-यात्रा पर तो जा सकता है लेकिन मूर्ति-पूजा का अन्त कोई नहीं पा सकता इसलिए ये सीढ़ी ही है ऐसा अब आप मान लीजिए।

साभार: विश्वप्रिय वेदानुरागी

झूठ की खेती

आर्यों का बाहर से आक्रमण, यहाँ के मूल निवासियों को युद्ध कर हराना, उनकी स्त्रियों से विवाह करना, उनके पुरुषों को गुलाम बनाना, उन्हें उत्तर भारत से हरा कर सुदूर दक्षिण की ओर खदेड़ देना, अपनी वेद आधारित पूजा पद्धति को उन पर थोंपना आदि अनेक भ्रामक, निराधार बातों का प्रचार जोर-शोर से किया जाता है। वैदिक वाङ्मय और इतिहास के विशेषज्ञ स्वामी दयानंद सरस्वती जी का कथन इस विषय में मार्ग दर्शक है।

स्वामी जी के अनुसार किसी संस्कृत ग्रन्थ और इतिहास में नहीं लिखा कि आर्य लोग ईरान से आये और यहाँ के जंगलियों से लड़कर, जय पाकर, निकालकर इस देश के राजा हुए। सन्दर्भ-सत्यार्थप्रकाश (8वां सम्मुलास)

जो आर्य श्रेष्ठ और दस्यु दुष्ट मनुष्यों को कहते हैं वैसे ही मैं भी मानता हूँ, आर्यावर्त देश इस भूमि का नाम इसलिए है कि इसमें आदि सृष्टि से आर्य लोग निवास करते हैं इसकी अवधि उत्तर में हिमालय दक्षिण में विन्ध्याचल पश्चिम में अटक और पूर्व में ब्रहमपुत्र नदी है इन चारों के बीच में जितना प्रदेश है उसको आर्यावर्त कहते है और जो इसमें सदा रहते हैं उनको आर्य कहते हैं।

सन्दर्भ : स्वमंतव्यामंतव्यप्रकाश-स्वामी दयानंद

स्वयं वेद क्या कहता है :-

अकर्मा दस्युरभि नो अमन्तुरन्यव्रतो अमानुषः।
त्वं तस्यामित्रहन् वधः दासस्य दम्भय ।।

(ऋग्वेद 10/22/8)

ऋग्वेद कहता है -

(1) 'अकर्मा दस्युः' अर्थात् जो कर्मशील नही है, जो निष्क्रिय है, उदासीन है, जो आनंद प्रमोद में मस्त है, वह अकर्मा है। जिसका अच्छा खाना-पीना और मौज करना ही लक्ष्य है, वह अकर्मा है। जो अन्य के लिए कुछ सोचता नहीं, वह अकर्मा है। अच्छे कार्य क्या क्या है, वह जानते हुए भी उसमें जो प्रवृत नहीं होता, वह अकर्मा है। अकर्मा दस्यु है। जो मनुष्य करनेयोग्य कार्य करने मे समर्थ है, फिर भी वह कार्य में परिणित नहीं होता, वह दस्यु है। दस्यु रहना अपराध है, दंडनीय है। हम अकर्मा नहीं, सुकर्मा बने। सुकर्मा का जीवन ओजस्वी, दीर्घायु और सभी के लिए अनुकरणीय होता है ।

जो मनुष्य वेदादि शास्त्र पढ़ता है, पढाता भी है, परन्तु व्यवहार में शून्य है अथवा तो विपरीत है, वह दस्यु है अर्थात् पृथ्वी पर भार रूप है ।

(2) अमन्तुः दस्युः अर्थात् जो मंतव्यहीन है, जिसका जीवन मे कोई खास उद्देश्य नही, जो मर्यादाओ का उल्लंघन करनेवाला है,जो मनमानी करेवाला है, वह दस्यु है , राक्षस है ।

दुराचारी सदा अपनी मनमानी करता है। श्रेष्ठ एवम् शालीन आचरण नहीं करनेवाला दस्यु है। जिसकी शिष्टाचार, सत्य, न्याय, धर्म , पुनर्जन्म, कर्म , आत्मा, ईश्वर किसी में भी कोई श्रद्धा विश्वास नहीं, वह दस्यु है, पापी है। जिसमें मननशीलता और समझदारी का अभाव है, वह दस्यु है। बिना सोचे समझे काम करने वाले अमन्तु है। जोश में होश खोने वाला, क्रोधादि के आवेग में संयम न रखनेवाला दस्यु है। उद्वेगी, असहनशीलता, छिछोरापन, नासमझी दस्युपन है, हेय है, हानिकारक है ।

(3) अन्यव्रतः दस्युः अर्थात् जो अन्य व्रती है, विपरीत व्यवहार करने वाला है, वह निंदनीय है। जो मनुष्य बाहर से तो धार्मिक है, अच्छे सात्विक वस्त्र धारण करते है, सभा सत्संग में सत्य और मधुर वाणी भी प्रगट करते है, किन्तु आचरण बिलकुल उसके विपरीत है, वह दस्यु है। जो अपने निहित स्वार्थ की सिद्धि की लिए सब के सामने व्रत भी ले लेते है, परंतु वर्तन सर्वथा उल्टा करते है, एसे पोंगा पंडितो से बचना चाहिए, क्योंकि वह अंदर से दस्यु, दानव होते है।

(4) अमानुषः दस्युः अर्थात् जिस मानव में मानवता नही, वह अमानुष है, दस्यु है। जिस मनुष्य में मनुष्यता का अभाव है, उसे अमानुष कहते है। पशु और मनुष्य के बीच का अलगावपन धर्म के कारण है। पशु कभी पशुधर्म से च्युत होता नहीं, परंतु मनुष्य एक चाय की प्याली के लिए अपना ईमान खो देता है, अपने धर्म से पतित हो जाता है। अपने विचार, आचार-व्यवहार से सभी जीवमात्र का हित करनेवाला मनुष्य है, देव है। जिसके विचार, वाणी तथा व्यवहार से मानवजाति में दुश्चरित्रता फैलती है, वह अमानुष दस्यु है, कठोर दंड के भागी है ।

असुरता, दस्युपन, अनार्यता, दानवता प्राणिमात्र के लिए दु:खदायक है, कलंकित है। ज्यादातर मनुष्य आर्यत्व से दूर जा रहे है। महदअंश में सभी का लक्ष्य **'येन केन प्रकरेण'** केवल धन हो गया है। कैसे भी हो, सभी को बहुत जल्दी, बहुत सारा धन चाहिए, पद-प्रतिष्ठा चाहिए, कंचन-कामिनी चाहिए। नेता लोग अपने कुछ स्वार्थ के लिए राष्ट्र को बेचने के तक तैयार हो जाते है। नेताओं को केवल वोट चाहिए। कैसे भी अपना काम होना ही चाहिए। कुछ भी हो जाए, कितनी भी मारपीट करनी पड़े, जरूर हो तो दंगा - फसाद भी किया जाए, किन्तु अपनी गद्दी सलामत रहनी चाहिए। सारा समाज, सभी क्षेत्र, सारे आश्रम, सारी वर्णव्यवस्था

नष्ट - भ्रष्ट हो चुकी है। अच्छे व्यक्तिओ की कोई सुनता नही, सज्जन लोग निष्क्रिय हो गए है। थोड़े से गुंडे, थोड़े से देशद्रोही सारे राष्ट्र पर हावी हो गए है। राष्ट्र खतरे में है, मानवजाति खतरे में, हिंदु (आर्य) जाति सिकुड़ चुकी है। क्या होगा मानवजीति का ? क्या होगा धर्म का, वेद का, सत्य ज्ञानविज्ञान का ?

वेद उत्तर देता है (तस्य दासस्य दंभय) उस दस्यु का नाश करो ।

हे परमेश्वर! आप ऐसे दस्युओं का विनाश करके विभिन्न नारकीय योनियों में डालते हो। हमें भी ऐसी शक्ति, साहस, ओजस्वीता, बल व उत्साह प्रदान करे, जिससे संगठित होकर उसे हम रोक सके और परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्व की रक्षा कर सके।

आवश्यकता है सभी सज्जन संगठित हो जाए, एक समान विचारवाले हो जाए, एक समान गतिवाले हो जाए, एक लक्ष्य तथा एक मान्यतावाले हो जाए। समाज तथा राष्ट्र में दस्युओं के विनाश के लिए सर्वस्व की आहुति देने हेतु सुकर्मा संत- महात्मा मानवसमाज को प्रेरित करे और धर्म का सुस्थापन हो ऐसा घोर पुरुषार्थ किया जाय। दुष्टों का हनन और सज्जन की रक्षा होनी चाहिए।

साभार : महिन्द्र गांधी

स्वामी श्रद्धानन्द की जामा मस्जिद से गर्जना

सन् *1919 में जामा मस्जिद से दिया हुआ भाषण इतिहास की अविस्मरणीय घटना है। वहाँ लाखों मुसलमान उनका भाषण सुनने आए थे। स्वामी जी मिम्बर पर चढ़े और उन्होंने सबसे पहले वेद मंत्र का पाठ किया। ऋग्वेद के उस मंत्र का गम्भीर आवाज में पाठ करते समय निस्तब्धता छा गई। स्वामी जी की वाचन शैली ऐसी थी कि उनके साथ ही साथ सभी श्रोता भी तन्मय हो गये। क्या हुआ वह वेद मंत्र था, पर सच्चाई तो सर्वत्र सच्चाई ही होती है। मंत्र था -*

त्वं हि नः पिताः वसो, त्वं माता शतक्रतो।
बभूविथः। अधा ते सुम्न मीमहे।
(ऋग्वेद 8.98.11)

हे सबको बसाने वाले! अपरिमित ज्ञान और कर्म वाले! तू ही हमारा पिता है, तू ही हमारी माता है। तू आनन्द का सागर है अतः हम तुझसे सुख और शान्ति की याचना करते हैं। उन्होंने उस दिन देश की एकता के लिए 'हम' शब्द की जो व्याख्या की और 'ह' से हिन्दू तथा 'म' से मुसलमान बताते हुए कहा कि 'हम' बनने के लिए दोनों को एक बनना होगा। इस प्रकार राष्ट्रीय एकता का पाठ पढ़ाया। स्वामी श्रद्धानन्द ने दूसरे दिन भी भाषण में वेद मंत्र पढ़ा। मंत्र था -

इन्द्र ऋतु न आभर, पिता पुत्रेभ्यो यथा।
शिक्षा णो अस्मिन्युरुहूत यामनि जीवा ज्योतिश्शीमहि।।

हे प्रभो! हे पुरुदूत! ऐश्वर्य शालिन प्रभो! तू हमारी नस-नस में कर्म को भर दे, ताकि हम जीवन संग्राम में जीवित जागृत रहते हुए ज्योति को प्राप्त कर सकें। जिस प्रकार पिता अपने पुत्र को ज्ञान का उपदेश देकर उन्हें सन्मार्ग पर चलाना है, तू भी हमें उत्तम ज्ञान प्रदान कर श्रेष्ठ मार्ग पर चला। प्रभो! इस संसार के कठिन मार्ग पर चलने के लिए तू हमें शिक्षा दे जिससे हम प्रकाशरूप तुझे प्राप्त कर सके।

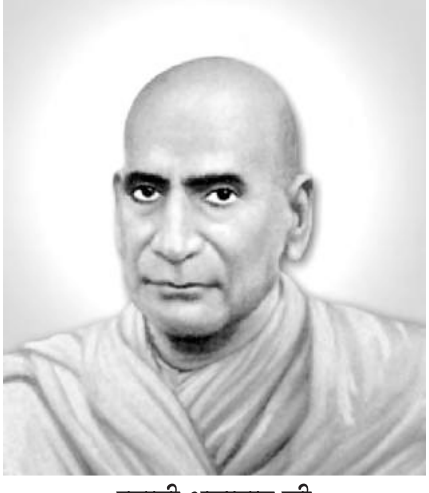

स्वामी श्रद्धानन्द जी

स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने भाषण के अन्त में 'ओ३म् शान्तिः शान्तिः' शान्ति का पाठ किया। स्वामी श्रद्धानन्द जी ऐसे पहले और अन्तिम महापुरुष हैं जिन्होंने जामा मस्जिद की मिम्बर से गैर मुस्लिम होते हुए भी वेद मंत्र से भाषण दिया और वेद मंत्र के साथ ही समाप्त किया।

राष्ट्रपिता ***महात्मा गांधी*** *के शब्दों में* ***''स्वामी श्रद्धानन्द जी से बढ़कर बहादुर आदमी मैंने संसार भर में नहीं देखा। जब कोई मुझे महात्मा कहता है तो मेरा दिल हता है - महात्मा मैं नहीं श्रद्धानन्द जी है।''***

वैश्विक उन्नति का आधार : भारतीय संस्कृति

दुनिया में भौतिक उन्नति के नित नए कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं। व्यक्ति जहाँ चन्द्रमा से बहुत ऊपर तक पहुंच गया है वहीं समुद्र तल की गहराइयों की सीमाओं को भी लांघ चुका है। तकनीक के माध्यम से घर बैठे सफलतापूर्वक ड्रोन हमले संभव हुए हैं तो वहीं व्यक्ति विकास के नित नये साधनों का आविष्कार किया जा रहा है किन्तु देखने में आ रहा है कि दुनिया भर में स्वार्थसिद्धि और भौतिक उन्नति करते-करते व्यक्ति अपने प्राकृतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व नैतिक उत्तरदायित्वों को भूलता जा रहा है। वह यह भी भूल जाता है कि भगवान् द्वारा निर्मित इस प्रकृति के संसाधनों पर सृष्टि के अन्य प्राणियों का भी उतना ही अधिकार है जितना तुम्हारा। एक सुसंस्कृत समाज में रहने वाले संस्कारयुक्त व्यक्ति के प्रत्येक क्रियाकलाप में विश्व कल्याण की भावना सदैव सन्निहित रहती है। संस्कृति किसी भी समाज या राष्ट्र का आइना होती है। हालांकि संस्कृति की अवधारणा इतनी विस्तृत है कि उसे एक वाक्य में परिभाषित करना सम्भव नहीं है तथापि, यह कहा जा सकता है कि मानव जीवन के दिन-प्रतिदिन के आचार-विचार, जीवन-शैली, कार्य-व्यवहार, धार्मिक, दार्शनिक, कलात्मक, नीतिगत कार्य-कलापों, परम्परागत प्रथाओं, खान-पान, संस्कार इत्यादि के समन्वय को संस्कृति कहा जाता है। अनेक विद्वानों ने संस्कार के परिवर्तित रूप को ही संस्कृति के रूप में स्वीकार किया है।

भारतीय संस्कृति के प्रेरणादाई बिन्दुओं पर विचार करें तो पाएंगे कि यह उदार, गुणग्राही व समन्वयशील रही है। संवेदना, कल्पना, आचरण, भाव, संयम, नैतिकता, उदारता और आत्मीयता के तत्त्व अविच्छिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। नीति और सदाचार की रक्षार्थ कर्मफल का सिद्धान्त व पुनर्जन्म के प्रति आस्था एक ऐसी उत्तम दार्शनिक ढाल है जो व्यक्ति को अनैतिकता की ओर जाने ही नहीं देती। ईमानदारी, परोपकार, पाप के प्रति घृणा, जीव दया जैसे तत्त्व घोर दरिद्रता और सामाजिक अव्यवस्था के रहते हुए भी चिरस्थाई रहते हैं।

वास्तव में संस्कृति ऐसी आदर्श शृंखला है जिसे कोई भी झुठला नहीं सकता, यहाँ तक कि व्यवहार में उन सिद्धान्तों के प्रतिकूल चलने वाला भी खुले रूप में उसका विरोध नहीं कर सकता। गंभीरता से विचार करें तो हम पाएंगे कि चोर अपने यहाँ दूसरे चोर को नौकर नहीं रखना चाहता। व्यभिचारी अपनी कन्या का विवाह व्यभिचारी के साथ नहीं करता और न अपनी पत्नी को किसी ऐसे व्यक्ति के साथ घनिष्ठता बढ़ाने देता है। ग्राहकों के साथ धोखेबाजी करने वाला दुकानदार भी वहाँ से माल नहीं खरीदता

जहाँ धोखेबाजी की आशंका रहती है। झूठ बोलने का अभ्यासी भी सम्बंधित लोगों से यही अपेक्षा करता है कि वे उसे सच बात बताया करें। अनैतिक आचरण करने वालों से पूछा जाए कि आप न्याय-अन्याय में से, उचित-अनुचित में से, सदाचार-दुराचार में से किसे पसन्द करतें है तो वह नीति पक्ष का ही समर्थन करेंगे। अपने सम्बंध में परिचय देते समय हर व्यक्ति अपने आपको नीतिवान के रूप में ही प्रकट करता है। इन तथ्यों पर विचार करने से प्रकट होता है कि भारतीय संस्कृति की अन्तरात्मा एक ऐसी दिव्य परम्परा के साथ गुंथी हुई है जिसे झुठलाना किसी के लिए भी, यहाँ तक कि पूर्ण कुसंस्कारी के लिए भी सम्भव नहीं हो सकता। वह अपने दुराचरण के बारे में अनेक विवशताएं बताकर अपने को निर्दोष सिद्ध करे का प्रयत्न तो कर सकता है, पर अनीति को नीति कहने का साहस नहीं कर सकता। यही कारण है जिसके आधार पर भारतीय संस्कृति को विश्व की कालजयी संस्कृति कहा गया है।

कोई अन्य हमारा भाग्य विधाता नहीं है बल्कि व्यक्ति अपना विकास अपने परिश्रम से स्वयं ही कर सकता है। वह अपने सुख-दु:ख दोनों का कर्ता स्वयं ही तो है। यम, नियम, योग, ध्यान, प्राणायाम, आसन इत्यादि से जहाँ व्यक्ति स्वयं को मजबू करता है वहीं 'सर्वे भवन्तु सुखिन:, सर्वे सन्तु निरामया' या 'इदम् राष्ट्राय, इदं न मम' या 'परम् वैभवन्ने, त्वमेव तत् स्वराष्ट्रं' की प्रार्थना के बारे सृष्टि के सभी प्राणियों के कल्याण की कामना करता है।

मातृवत परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्टवत... यानि मातृशक्ति को देवी रूप में मानना तथा दूसरे के धन को मिट्टी के समान मानना हमारी संस्कृति की विशेषताएँ हैं।

वर्ण व्यवस्था जन्म-जाति के साथ जुड़कर भले ही आज विकृत होकर बदनाम हो पर उसके पीछे अपने व्यवसाय तथा अन्य

विशेषताओं को परम्परागत रूप से बनाये रहने की भारी सुविधा है। आज छोटे-छोटे कामों के लिए नये सिरे से ट्रेनिंग देनी पड़ती है जबकि प्राचीन काल में वह प्रशिक्षण वंश परम्परा के आधार पर बचपन में ही आरम्भ हो जाता था और अपने विषय की प्रवीणता सिद्ध करता था। आश्रम व्यवस्थान्तर्गत ब्रह्मचर्य और गृहस्थ में बीतने वाली व्यक्ति की आधी आयु भौतिक प्रगति के लिए और आधी आयु आत्मिक ज्ञान के संवर्धन के लिए है। वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम आत्मिक श्रेष्ठता के संवर्धन तथा लोकमंगलकारी कार्यों में योगदान देने के लिए निश्चित है। इससे व्यक्ति और समाज दोनों की श्रेष्ठता समुन्नत रहती है।

प्राचीन काल से ही हमारे यहाँ तीर्थाटन द्वारा स्वास्थ्य संवर्धन, अनुभव वृद्धि, स्वस्थ मनोरंजन, व्यवसाय वृद्धि, अर्थ विरण जैसे अनेक लाभ बताए हैं। देवदर्शन के बहाने तीर्थयात्री गाँव-गाँव, गली-मुहल्लों में जाकर जहाँ धार्मिक जीवन की प्रेरणा देते हैं, वहीं साधु-सन्तों, ब्राह्मणों इत्यादि के आतिथ्य सत्कार एवं दान-दक्षिणा के पीछे भी यही भावना भरी हुई है कि लोक सेवा के लिए स्वयं समर्पित कार्यकर्त्ताओं को किसी प्रकार की आर्थिक तंगी का सामना न करना पड़े।

पर्वों, त्योहारों और जयन्तियों की अधिकता भारतीय संस्कृति की ऐसी विशेषता है जिसके सहारे सत्परम्पराओं को अपनाये रहने और प्रेरणाओं को हृदयंगम किये रहने के लिए पूरे समाज को निरन्तर प्रकाश मिलता है। व्रत-उपवासों से जहाँ उदर रोगों की कारगर चिकित्सा की पृष्ठभूमि बनती है वहीं मन: शुद्धि का भाव भी जुड़ा है। प्रत्येक शुभकर्म के साथ अग्निहोत्र (हवन) जुड़ा रहने के पीछे भी लोगों को यज्ञीय जीवन जीने की प्रेरणा सन्निहित है।

आज के भातिक चिन्तन ने ब्रह्माण्ड की परिकल्पना एक विराट मशीन के रूप में की है। विकास के नाम पर 24 घंटे बिजली और चमचमाती सड़कों का जाल बिछाने के अतिरिक्त विश्व के अधिकांश देश मशीनों के द्वारा अधिकाधिक उत्पादन व उत्पादित सामान की खपत के लिए मंडियों की तलाश के साथ अधिकाधिक पूँजी जुटाने की दौड़ में लगे हैं। इसके लिए प्रकृति का निर्मम दोहन किया जा रहा है। कारखानों का जहरीला धुआँ हवा को तथा केमिकल रूपी जहर नदियों के पानी को जहरीला बना रहा है। रासायनिक खाद ने तो हमारी जमीन को ही जहरीला और बंजर बना दिया है। परिणामत: व्यक्ति को न तो श्वसन हेतु साफ हवा, न पीने को स्वच्छ पानी और न ही पेट भरने को पौष्टिक अन्न, सब्जी आदि ही उपलब्ध है। बाजारवाद और तथाकथित विकास ने हाथ मिलाकर हवा, पानी, जमीन को जहरीला बना दिया है। इस सबके उलट भारतीय सांस्कृतिक दर्शन सदैव प्रकृति का पुजारी रहा है। इसमें कहा गया है कि प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग तो करें किन्तु उसके दोहन की स्पष्ट मनाही है। शायद इसी कारण हमारे यहाँ पेड़-पौधों, नदियों-तालाबों, खेत-खलिहानों, पशु-पक्षियों, कूप-बावड़ियों इत्यादि को समय-समय पर पूजे जाने का विधान है जिससे उनमें हमारी आस्था गहरी बनी रहे और उनके अनावश्यक दोहन से बचें।

मध्य प्रदेश के भीमबेटका में पाये गये शैलचित्र, नर्मदा घाटी में की गई खुदाई तथा सिन्धु घाटी की सभ्यता के विवरणों से भी प्रमाणित होता है कि हमारों वर्ष पहले उत्तरी भारत के बहुत बड़े भाग में एक उच्च कोटि की संस्कृति का विकास हो चुका था। भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता एवं उदारता के कारण ही बाहर से आने वाले शक, हूण, यूनानी तथा कुषाण जैसी प्रजातियों के लोग भी घुलमिल कर अपनी पहचान खो बैठे। अन्य देशों की संस्कृतियाँ तो समय की धारा के साथ-साथ नष्ट होती रही है किन्तु भारत की संस्कृति आदि काल से ही अपने परम्परागत अस्तित्त्व के साथ अजर-अमर बनी हुई है। भारतीय संस्कृति के इस लचीजे स्वरूप में जब भी जड़ता की स्थिति निर्मित होती हुई नजर आई, तब किसी ने किसी महापुरुष ने इसे गतिशीलता प्रदान की। प्राचीनकाल में भगवान् बुद्ध और भगवान् महावीर, मध्यकाल में जगद्गुरु शंकराचार्य, कबीर, गुरुनानक देव तथा आधुनिक काल में स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा ज्योतिबा फुले इत्यादि द्वारा किये गये प्रयास इस संस्कृति की महत्त्वपूर्ण धरोहर बन गये।

सम्पूर्ण भारत में जन्म, विवाह और मृत्यु के संस्कार, रीति-रिवाज, आचार-व्यवहार और तीज-त्यौहारों में भी समानता है। यहाँ 1400 बोलियों तथा औपचारिक रूप से मान्यता प्राप्त 18 भाषाओं की विविधता के बाजवूद, संगीत, कला, साहित्य, नृत्य और नाट्य के मौलिक स्वरूपों में आश्चर्यजनक समानता है। संगीत के सात स्वर और नृत्य के त्रिताल सम्पूर्ण भारत में समान रूप से प्रचलित हैं। भारत अनेक मत, सम्प्रदायों और पृथक् आस्थाओं एवं विश्वासों का महादेश है, तथापि इसका सांस्कृतिक समुन्चय और अनेकता में एकता का स्वरूप संसार के अन्य देशों के लिए न सिर्फ विस्मयकारी बल्कि अनुपालन के योग्य बन गया है। आज दुनिया के अनेक देशों ने अपनी सुख सम्पदा और उन्नति के असीमित साधन जुट लिये हों किन्तु सच्चा सुख, शान्ति, मानवता, आध्यात्मिकता और प्रकृति प्रेम जो भारत में दिखाई देता है, वह अन्यत्र कहीं नहीं है। इसका कारण है कि भारतीय संस्कृति जिन मूल गुणों व मूल्यों से भरी हुई है वही इसे महान् बनाते हैं। आज जहाँ विश्व की हर बड़ी से बड़ी समस्या का समाधान हमारे सांस्कृतिक मूल्यों में निहित है वहीं वैश्विक उन्नति का आधार भी भारतीय संस्कृति ही है।

साभार : विनोद बंसल जी

आस्तिकता और चमत्कार

एक विदेशी विचारक ने कहा था कि दुनिया में और कहीं हो न हो भारत में भगवान अवश्य है। क्योंकि कोई भी इस देश को बसाना नहीं चाहता, फिर भी यह बसा हुआ हैय यह किसी चमत्कार से कम नहीं है। नास्तिक विचार वाले लोग भगवान के बारे में जो मरजी कह देते हैं। उनकी भगवान से सबसे बड़ी शिकायत यह होती है कि इतनी गड़बड़ हो रही है फिर भी भगवान कुछ करता क्यों नहीं। इस ब्रह्माण्ड में इतना कुछ हो रहा है जो मनुष्य कर नहीं सकता फिर भी उन्हें यह सब दिखाई नहीं देता। लेकिन जो काम मनुष्य कर सकता है, मनुष्य को ही करने चाहिएँ, मनुष्यों के करने से ही उन कार्यों की सार्थकता है, उन कार्यों के लिए भगवान को दोष देता रहता है, और फिर एक नाजुक बच्चे की तरह कह देता है कि जा भगवान मैं तुझे नहीं मानता। तू है ही नहीं। भगवान को इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता है कि कोई उसे मानता है या नहीं। कोई उससे बात करे द्धउपासनाऋ तो इससे उसको कोई लाभ नहीं होता। जो उससे बात करता है, वही इससे लाभ उठाता है। नास्तिक भी दु:ख होने पर रोते बिलखते हैं, सुख होने पर खुश होते हैं। कोई गलत कार्य करते समय उनको भी कोई रोकने की प्रेरणा सी करता अनुभव होता है। अच्छा कार्य करने पर उनको भी आत्म-संतुष्टि मिलती है।

आज लगता है कि आस्तिक लोग नास्तिकों से ज्यादा नास्तिक हैं। उसे ईश्वर की सत्ता के स्पष्ट दिखाई देने वाले लक्षणों, युक्तियों, प्रमाणों से कुछ लेना देना नहीं है। उसे तो वह चमत्कार चाहिए जिसे वह चमत्कार समझता है। यह विराट् ब्रह्माण्ड, यह अद्‌भुत व्यवस्था, प्रकृति के नियम, कर्म-फल व्यवस्था, यह सृष्टि रचना-उसे चमत्कार नहीं लगता। ये तथाकथित आस्तिक लोग समोसे खाकर धन प्राप्ति या नौकरी मिलने को चमत्कार मानते हैं। कादियानी पैगम्बर ने भविष्यवाणी की थी किसी के मरने की। कई वर्ष बाद उस महापुरुष द्धपंडित लेखरामऋ को छुरे से मार दिया गया। आज तक वे इसी को चमत्कार प्रचारित कर रहे हैं। आस्तिक कहलाए जाने वाले लोग अविवाहित स्त्री से संतान होना, मुरदे का जी उठना आदि चमत्कारों पर आधारित हैं। ये चमत्कार न हों तो उनकी आस्तिकता का आधार ही समाप्त हो जाता है।

आप धार्मिक चैनल देखें। कोई गुरु, कोई भगवान? अपने आप को पूरा भगवान सिद्ध करने के लिए अपने अनुयायियों के अनुभव सुनवाने पर पर्याप्त समय खर्च करता है। आध्यात्मिक कही जाने वाली पत्रिकाओं में अनेक पृष्ठ इसी कार्य के लिए होते हैं। चेलों के जो अनुभव होते हैं वे इस तरह के नहीं कि हमारी इस तरह से आत्मिक उन्नति हो गई, हमने योग में यह गति प्राप्त कर ली, बल्कि चमत्कारों की साक्षियाँ होती हैं। असाध्य रोग ठीक हो गया, नौकरी मिल गई। व्यापार में लाभ हो गया। यह आस्तिकता तो नास्तिकता से भी ज्यादा हानिकारक है।

आस्तिकता जीवन की आधारशिला है और आस्तिकता की आधारशिला है परमेश्वर की सर्वव्यापकता और न्याय व्यवस्था को जानना और मानना। अच्छी प्रकार जानकर ही मानने से कुछ लाभ हो सकता है। जो यह मानते और जानते हैं कि परमेश्वर न्यायकारी है, वह कर्मों का फल पूरा-पूरा देता है, और यह जानकर परमेश्वर की आज्ञा के अनुसार आचरण करते हैं वे ही सच्चे आस्तिक हैं। वह परमेश्वर का भक्त और प्रशंसक भी है। जो यह सोचता है कि किसी व्यक्ति विशेष की सिफारिश से परमेश्वर हमारे पापकर्मों का फल नहीं देगा या पापों के बदले में सुख देगा- वह वास्तव में परमेश्वर का सबसे बड़ा निन्दक और नास्तिक है। आप्त पुरुषों के उपदेश से और परमात्मा की उपासना करने से हम आगे पाप करने से हट जाते हैं यह क्या कोई छोटा चमत्कार है।

यदि आस्तिक होने के बाद भी व्यक्ति के कर्म में सुधार नहीं आया तो आस्तिक होने का कोई अर्थ नहीं है। इसलिए आस्तिकता का मूल आधार है परमेश्वर की सर्वव्यापकता। परमेश्वर संसार के कण-कण में व्यापक है। हमारे हृदय में भी। वह किसी भी कार्य को करने से पहले, हमारे मन में संकल्प आते ही जान लेता है। वह हमारे अच्छे बुरे कर्मों को ठीक प्रकार से जानता है। उससे छुपकर कोई पाप नहीं किया जा सकता और पाप करने के बाद उसके दु:ख रूप फल से किसी भी प्रकार से बचा नहीं जा सकता। यही आस्तिकता की आधारशिला है। किसी चौथे, सातवें आसमान या किसी सतलोक में बैठा हुआ भगवान न तो हमारे कर्मों को जान सकता है और न फल दे सकता है। उसको वहाँ बैठाकर फिर हमें उसके संदेश वाहकों की कहानी बनानी पड़ती है। फिर इसकी जांच का चक्कर, कि कौन संदेशवाहक झूठा है कौन सच्चा? फिर इसके प्रमाण के लिए चमत्कार!! और '**चमत्कार**' तो सारे ही करना जानते हैं।

संभवत: उस विदेशी विचारक ने ठीक ही कहा कि इस देश में कोई भगवान अवश्य है। कोई भगवान का दूत बनकर खा रहा है। अपने अपने अलग अलग भगवान् बनाकर खा रहे हैं। कोई भगवान को गाली देकर खा रहा है। भगवान की भक्ति से मिलने वाले आत्मिक आनन्द को प्राप्त करने के बारे में भी कोई सोचे तो सचमुच में चमत्कार हो जाए।

- सहदेव समर्पित

गुरुकुल कुरुक्षेत्र : संक्षिप्त परिचय

गुरुकुल कुरुक्षेत्र में शैक्षणिक स्तर पर दो प्रकल्प चलते हैं। सी.बी.एस.ई. पाठ्यक्रम के अनुसार 10+2 तक का विद्यालय है जो **ISO 9001: 2008** प्रमाणित संस्थान है। इस पाठ्यक्रम के अनुसार यहाँ लगभग 1500 विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। दूसरा **आर्ष महाविद्यालय** है जिसमें वैदिक व्याकरण व वैदिक साहित्य का अध्ययन कराया जाता है। इन शिक्षण प्रकल्पों के अतिरिक्त शिक्षा, समाज सेवा व सामाजिक चेतना को ध्यान में रखते हुए जो विविध गतिविधियाँ चलाई जा रही हैं, इनकी संक्षिप्त झलक निम्न प्रकार है -

प्रशासनिक विभाग : आधुनिक तीन मंजिला प्रशासनिक भवन में अतिथियों के लिए 250 कुर्सियाँ एवं सुविधायुक्त वातानुकूलित सभागार व कार्यालय हैं।

आर्ष महाविद्यालय : वैदिक धर्म एवं वेदों के प्रचार हेतु आर्ष पाठ विधि से व्याकरण एवं वेद के विद्वान् तैयार किये जा रहे हैं।

वातानुकूलित संगणक प्रयोगशालाएँ : गुरुकुल में वातानुकूलित कम्प्यूटरीकृत शिक्षा-व्यवस्था है। यहाँ 75 कम्प्यूटर हैं जिन पर छोटे-बड़े छात्रों हेतु अलग-अलग व्यवस्था है। इनमें प्रोजेक्टर और वाई-फाई की सुविधा भी है।

वातानुकूलित भाषा व विज्ञान प्रयोगशालाएँ : शिक्षा को व्यावहारिक रूप देने व छात्रों के पूर्ण विकास हेतु बहुतकनीकी यन्त्रों से युक्त व दृश्य-श्रव्य यंत्रों से सुसज्जित प्रयोगशालाएँ हैं।

वातानुकूलित पुस्तकालय व वाचनालय : छात्रों के विकास हेतु वेद, उपनिषद्, वेदांग एवं स्वतन्त्रता सेनानियों का इतिहास व महापुरुषों की जीवनियाँ तथा विज्ञान, दर्शन सम्बन्धी हजारों पुस्तकें व सी.डी. आदि हैं। 21 दैनिक समाचार पत्र एवं 75 साप्ताहिक व मासिक पत्रिकाएँ आती हैं।

अत्याधुनिक गोशाला : छात्रों को शुद्ध एवं पौष्टिक दुग्ध उपलब्ध कराने के लिए गुरुकुल में अत्याधुनिक गोशाला है। जहां पर विभिन्न देशी व विदेशी नस्ल की लगभग 282 गायें हैं जो प्रतिदिन 1150 लीटर दूध देती हैं।

अश्वारोहण (घुड़सवारी): इसके लिए उत्तम नस्ल के 8 घोड़ियाँ व 1 घोड़ा है। कुशल प्रशिक्षकों द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है।

क्लीनिकल लेबोरेट्री : पशुओं की विभिन्न बीमारियों से संबंधित टेस्ट हेतु लैब है जहां पर अनुभवी डॉक्टर द्वारा पेशाब, खून व दूध आदि की प्रामाणिक जाँच की जाती है।

शूटिंग (निशानेबाजी प्रशिक्षण): इसके माध्यम से गुरुकुल ने अभी तक 10 अन्तर्राष्ट्रीय खिलाड़ी राष्ट्र को दिये हैं।

एन.सी.सी (छोटे-बड़े छात्रों हेतु): गुरुकुल एन.सी.सी. के छात्र गणतन्त्र व स्वतंत्रता दिवस की परेड में भाग ले चुके हैं तथा एन.सी.सी. के कैम्पों में प्रथम स्थान प्राप्त कर चुके हैं।

नेशनल डिफेंस एकेडमी (एन.डी.ए.): सेवानिवृत्त सेना अधिकारी के मार्गदर्शन में एन.डी.ए. परीक्षा की तैयारी के लिए दो एकड़ भूमि पर ऑब्स्टेकल कोर्स का निर्माण किया गया है।

एन.एस.एस विंग : राष्ट्रीय एकता व सामाजिक सद्भाव हेतु एन.एस.एस. द्वारा सामाजिक चेतना जागृत की जाती है।

विशाल भोजनालय : छात्रों, गुरुकुल से जुड़े सभी कर्मचारियों एवं अतिथियों हेतु विशाल भोजनालय की व्यवस्था है।

संगीतमय फव्वारे : गर्मियों की उमस से बचने एवं मनोरंजनपूर्ण स्नान के लिए आकर्षक संगीतमय फव्वारें गुरुकुल में है।

पं. अमीचन्द संगीत केन्द्र : छात्रों को मनोरंजन एवं संगीत शिक्षण हेतु भक्त अमीचन्द संगीत केन्द्र में संगीत की शिक्षा-व्यवस्था है।

योग एवं प्राकृतिक चिकित्सालय : गुरुकुल में योग एवं प्राकृतिक चिकित्सालय है जो गम्भीर रोगों के उपचार के साथ चिकित्सा सम्बन्धी **'डिप्लोमा इन योग एंड साइंस'** कोर्स भी कराया जाता है।

धन्वन्तरि चिकित्सालय : छात्रों के शारीरिक स्वास्थ्य एवं खेलकूद में आने वाली हल्की चोट-मोच आदि के लिए आयुर्वेदिक चिकित्सालय में कुशल वैद्यों की व्यवस्था है।

वेद प्रचार विभाग : भारतीय संस्कृति एवं वेदों के प्रचार हेतु गुरुकुल में वेद प्रचार विभाग का गठन किया गया। जिसके तहत लगभग डेढ़ दर्जन प्रचारक दिन-रात विभिन्न क्षेत्रों में घूम-घूम कर लोगों को वेदवाणी और आर्य सिद्धान्तों के प्रति जागरूक कर रहे हैं। वहीं योग शिक्षकों के माध्यम से विद्यालय व कॉलेजों में योग एवं चरित्र निर्माण अभियान चलाया जा रहा है।

इनके अतिरिक्त **जीरो बजट प्राकृतिक कृषि फार्म, स्वामी श्रद्धानन्द आयुर्वेदिक फार्मेसी, आकर्षक पौधशाला (नर्सरी)** भी है। आर्य भजनोपदेशक प्रशिक्षण केन्द्र, जिसमें आर्य भजनोपदेशक तैयार किये जाते हैं। वहीं **'गुरुकुल-दर्शन'** मासिक पत्र के माध्यम से वैदिक धर्म एवं संस्कृति का प्रचार-प्रसार किया जा रहा है।

युवा निर्माण - राष्ट्र निर्माण

युवा बचेगा - देश बचेगा

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

गुरुकुल कुरुक्षेत्र

के विशाल प्रांगण में

सान्निध्य - आचार्य देवव्रत जी संरक्षक, गुरुकुल कुरुक्षेत्र एवं महामहिम राज्यपाल, हिमाचल प्रदेश

आर्यवीरों / वीरांगनाओं का योग एवं युवा जीवन निर्माण शिविर

1 जून से 5 जून 2018 आर्यवीर (लड़कों) के लिए

7 जून से 11 जून 2018 आर्यवीरांगना (लड़कियों) के लिए

धर्मप्रेमी सज्जनों, देवियों!

आपको जानकर बहुत प्रसन्नता होगी कि गुरुकुल कुरुक्षेत्र में योग एवं जीवन निर्माण शिविर लगाया जा रहा है, जिसमें आर्यवीर दल के अनुभवी व्यायाम शिक्षकों द्वारा आर्यवीरों व शिक्षिकाओं द्वारा आर्यवीरांगनाओं को शारीरिक विकास हेतु योगासन, प्राणायाम, दण्ड-बैठक, कराटे, पी.टी. एवं सूर्य-नमस्कार आदि का प्रशिक्षण दिया जाएगा। साथ ही बौद्धिक एवं आत्मिक विकास हेतु सन्ध्या-यज्ञ, नैतिक-शिक्षा, शिष्टाचार एवं व्यक्तित्व विकास आदि का प्रशिक्षण भी दिया जाएगा। शिविर में भाग लेने वाले आर्यवीरों व आर्यवीरांगनाओं को जीवन के हर क्षेत्र में आगे बढ़ने व ऊँचा उठने की प्रबल प्रेरणा दी जाएगी। वर्तमान युवा पीढ़ी पारिवारिक, सामाजिक व राष्ट्रीय कर्त्तव्यों को समझें, स्वीकार करें और समाज व राष्ट्र के आदर्श नागरिक बनकर माता-पिता व देश के गौरव को बढ़ा सकें इसका प्रशिक्षण भी दिया जायेगा।।

इसमें भाग लेने वाले युवक - एक खाकी निकर, सफेद बनियान, चादर ओढ़ने हेतु, एक गिलास, एक चम्मच, कॉपी-पेन तथा अन्य दैनिक उपयोग के वस्त्र आदि साथ लेकर आएं।

युवतियों के लिए - एक जोड़ा सफेद सलवार कमीज, जूते, केसरिया चुन्नी, एक चादर ओढ़ने हेतु, एक गिलास, एक चम्मच, एक कॉपी-पेन तथा दैनिक उपयोग के वस्त्र आदि साथ लेकर आएं। अपने साथ कोई कीमती सामान न लायें।

विशेष सूचना: शिविर की तिथियों से पहले पंजीकरण करवाएं शिविर शुरू होने के बाद रजिस्ट्रेशन नहीं किए जाएंगे।

निवेदक : **कुलवन्त सिंह सैनी,** प्रधान, गुरुकुल कुरुक्षेत्र एवं समस्त गुरुकुल परिवार

पंजीकरण करवाने हेतु सम्पर्क सूत्र :-

समरपाल आर्य मो. 86890-01516	महाशय जयपाल आर्य मो. 86890-01136	चन्द्रपाल आर्य मो. 86890-01506	जसविन्द्र आर्य मो. 86890-01210
विशाल आर्य मो. 86890-01517	सोनू कुमार मो. 86890-02025	आर्यमित्र मो. 86890-01504	जयराम आर्य मो. 86890-02401

गुरुकुल की विविध गतिविधियाँ

गुरुकुल कुरुक्षेत्र में आयोजित बाल-सभा में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले विभिन्न सदनों के छात्रों के साथ गुरुकुल के शिक्षकगण व सदन अध्यक्ष

गुरुकुल में आचार्य देवव्रत जी का स्वागत करते हुए प्रधान कुलवन्त सैनी जी, कर्नल अरुण दत्ता, सह-प्राचार्य शमशेर सिंह व डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार जी

गुरुकुल में नये सत्र 2018-19 के शुभारम्भ अवसर पर मंचासीन प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी, प्राचार्य कर्नल अरुण दत्ता जी, सह-प्राचार्य शमशेर सिंह व नन्दकिशोर आर्य जी

एन.सी.सी. छात्रों को अग्निशमन प्रशिक्षण देते हुए लेफ्टिनेंट श्रवण कुमार साथ में है गुरुकुल के प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी व अन्य अधिकारीगण

गुरुकुल में हुई भाषण प्रतियोगिता के विजेता छात्रों के साथ प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी जी व जीरो बजट प्राकृतिक कृषि के प्रचारक एवं वैज्ञानिक डॉ. हरिओम जी

RNI Reg.No. : HARBIL / 2015 / 64244
Postel Regn. No. HR/KKR/181/2018-2020

स्वामी– गुरुकुल कुरुक्षेत्र, कुरुक्षेत्र के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक श्री कुलवंत सिंह सैनी द्वारा क्रेजी ऑफसेट प्रिंटिंग प्रैस, सलारपुर रोड, निकट डी.एन. कालेज, कुरुक्षेत्र (हरियाणा) से मुद्रित एवं गुरुकुल कुरुक्षेत्र, (निकट थर्ड गेट कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी), कुरुक्षेत्र से प्रकाशित। सम्पादक –कुलवंत सिंह सैनी

मूल्य-15रु एक प्रति (150रु वार्षिक)

प्रतिष्ठा में

_____

_____

_____